चन्दामामा
माँ – बच्चों का मासिक पत्र

Chandamama, June '50

Photo by B. N. Konda Reddy.

मेरी साड़ी देखो !

चन्दामामा
विषय सूची

इनके अलावा मन बहलाने वाली पहेलियाँ, सुन्दर रँगीले चित्र और भी अनेक प्रकार की विशेषताएँ हैं।

चन्दामामा कार्यालय
पोस्ट बाक्स नं० १६८६
मद्रास-१

चन्दामामा

माँ - बच्चों का मासिक पत्र

संचालक : चक्रपाणी

वर्ष १ | जून १९५० | अङ्क १०

मुख–चित्र

जब कंस ने सुना कि कृष्ण ने पूतना को मार डाला तो उसने तृणावर्त्त नामक एक और राक्षस को भेजा। एक दिन यशोदा कृष्ण को गोदी में लेकर खेला रही थी। उसी समय तृणावर्त्त एक भयंकर बवंडर का रूप बना कर वहाँ आया। उसके आते ही सारे गोकुल में इतनी धूल उड़ने लगी कि उसके मारे अँधेरा छा गया। सब लोग डर के मारे किवाड बंद कर घरों में घुस रहे। तृणावर्त्त ने कन्हैया को यशोदा की गोद से उठा लिया और भयंकर वेग से आकाश की ओर उड़ा ले चला। बेचारी यशोदा हाय! हाय! करने लगी। इस तरह आसमान में बहुत ऊँचे जाने के बाद कृष्ण ने तृणावर्त्त को जोर से पकड़ लिया और धीरे धीरे अपना वजन बढ़ाना शुरू किया। अब तृणावर्त्त को लेने के देने पड़ गए। उसने कृष्ण के हाथों से छूट कर भाग जाने की बहुत कोशिश की। लेकिन सब बेकार। अब मायावी कृष्ण एक पहाड़ जितने भारी हो गए थे। आखिर तृणावर्त्त उनका भार न सह सका। वह चीखता हुआ धड़ाम से धरती पर गिर कर मर गया। कृष्ण जमीन पर घुटनों के बल रेंगते हुए खेलने लगे, जैसे कुछ जानते ही न हों।

लालच का फल

एक गांव के पंडितजी जा
रहे शहर की ओर एक दिन।
मिला राह में एक ठाँव उन
को इक लड़का रोता उस छिन।

वह धरती पर ढूंढ़ रहा झुक
जैसे कोई चीज़ खो गई।
उसे देख कर पंडितजी के
मन में थोड़ी तरस आ गई।

कहा उन्होंने—'क्यों, बच्चे! तुम
ढूंढ़ रहे हो क्या धरती पर?'
लड़का बोला—'पंडितजी! खो
गई एक अँगूठी गिर कर।'

तब पंडितजी बोले—'लड़के!
झूठ बोलते हो क्या मुझसे?'
'मैं क्यों बोलूँ झूठ आप से?
मा की कसम!' कहा लड़के ने।

तब पंडितजी बोले—'लड़के!
उसे ढूंढ़ दूँ तो क्या दोगे?'
लड़का बोला—'मिली आपको
तो आधा आधा कर लेंगे।'

पंडितजी भी राजी होकर
लगे ढूंढने झुक धरती पर।
उनका भाग्य, अँगूठी उनको
मिल ही गई धूल में आखिर।

उसे उन्होंने दी लड़के को;
तब लड़का बोला—'पंडितजी!
हाय! क्या करूँ मैं अब? मेरे
पास नहीं कानी कौड़ी भी!'

पंडितजी ने दिया जवाब कि
'लड़के! कुछ चिन्ता न करो तुम।
मैं अँगूठी लेकर तुम को
दूँगा आधा दाम इसी दम।'

तब लड़के ने कहा—'अँगूठी
पंडितजी! पचास रुपए की।'
सुन पंडितजी ने जल्दी से
उसको आधी कीमत दे दी।

एक सुनार पास पहुँचे फिर
पंडितजी अँगूठी लेकर।
उसने कहा—'गिलट की है यह;'
बैठ रहे पंडित मुँह बाकर।

एक बार जैनों और ब्राह्मणों में इस बात पर झगड़ा उठ खड़ा हुआ कि दोनों में कौन बड़ा है। दोनों अपने आप को दूसरे से बड़ा मानते थे। इस तरह सारा राज उन दो दलों में बँट गया था। यहाँ तक कि राज-परिवार में भी इसके कारण मत-भेद उठ खड़ा हो गया था। राजा स्वयं जैनों को बड़ा मानता था। लेकिन रानी ब्राह्मणों पर ज्यादा श्रद्धा रखती थी। राजा जब जैनों की तरफदारी करता तो रानी को क्रोध आ जाता। रानी जब ब्राह्मणों का समर्थन करती तो राजा की भौंहें चढ़ जातीं। इस तरह जब कुछ दिन बीत गए तो राजा-रानी दोनों ने सोचा कि 'ऐसे काम नहीं चलेगा। जैनों और ब्राह्मणों में कौन बड़ा है यह हमेशा के लिए तय हो जाना चाहिए।' इसके लिए उन्होंने एक परीक्षा सोची। आधी रात को उन्होंने खुद जाकर महल के फाटक पर एक गढ़ा खोदा और उसमें एक मिट्टी का घड़ा, जिस में एक सोने का साँप बन्द था गाड़ दिया। उन्होंने उस बात को इतना गुप्त रखा था कि वह कोई नहीं जान सकता था।

दूसरे दिन राजा ने दरबार में जैनों और ब्राह्मणों दोनों दलों के प्रमुख व्यक्तियों को बुलाया। जब सब लोग आ गए तो राजा ने उठ कर कहा—"हमने अपने राज में एक जगह एक चीज़ छिपा रखी है। वह चीज़ क्या है, कहाँ छिपी है, इसका तुम दोनों दलों वालों को पता लगाना होगा। जिस दल वाले इसका पता लगा लेंगे उनको हम अनेक पुरस्कार देंगे। साथ ही उनके धर्म को हम अपना राज-धर्म बना लेंगे। लेकिन जिस दल वाले इसका पता नहीं लगा सकेंगे उनका हम समूल नाश कर देंगे। इसके लिए हम दोनों दलों को एक महीने का समय देते हैं।" यह कह कर राजा दरबार से चला गया।

रामगोपाल

इस विषम परीक्षा की बात सुनते ही दोनों दल वाले सोच में पड़ गए। लेकिन करते क्या? राजा की आज्ञा थी। सिर झुकाए घर चले गए।

जैन लोग गणित-शास्त्र के बड़े पंडित थे। इसलिए उन्होंने दूसरे ही दिन किले के चारों ओर तीन बार प्रदक्षिणा की और उँगलियों पर गुन कर हिसाब लगाया। तुरंत उन्हें सारी बात सच-सच मालूम हो गई। अपनी विजय से वे लोग फूले न समाए। उन्हें अपने ज्ञान का बड़ा घमंड हो गया। इसलिए उन्होंने तुरंत जाकर राजा के प्रश्न का उत्तर उससे नहीं कह दिया। उन्होंने सोचा कि तीसवें दिन भरे दरबार में ब्राह्मणों को खूब नीचा दिखाना चाहिए।

ब्राह्मणों को अपने तप के सिवा और किसी शक्ति का भरोसा न था। इसलिए वे झुंड के झुंड जाकर समुंदर में नहा कर वहीं किनारे पर तप करने लगे। जलती धूप में बालू पर बैठ कर तप करना क्या कोई आसान काम था? उन्हें दिन रात वहीं पड़े पड़े तप करने में बड़ा कष्ट उठाना पड़ा। लेकिन उन्होंने इसकी कोई परवाह न की। वे वहीं जम कर बैठ गए और आँखें मूँद कर तप करते रहे। इस तरह उन्हें तप करते हुए एक नहीं, दो नहीं, उनतीस दिन बीत गए। उन्हें न भूख-प्यास सताती थी और न नींद ही।

उन ब्राह्मणों की लगन देख कर सूरज भगवान को बहुत अचरज हुआ। उन्होंने सोचा—"इनके लिए अब सिर्फ एक दिन का समय रह गया है। देखें, ये लोग आखिरी दम तक इसी तरह तप करते रहते हैं या निराश हो सब कुछ छोड़-छाड़ कर चले जाते हैं!" यह सोच कर भगवान सूर्य उनकी तरफ थोड़ा ध्यान देने लगे। तीसवाँ दिन भी बीतने को आया। लेकिन उन

ब्राह्मणों में एक भी विचलित नहीं हुआ। धीरे धीरे अँधेरा पड़ गया और रात हो गई। यहाँ तक कि रात का तीसरा पहर भी बीत गया। लेकिन वे ब्राह्मण उसी तरह तप में लगे रहे। अब पौ फटने को सिर्फ एक पहर बच रहा। लेकिन उन ब्राह्मणों को समय का ज्ञान नहीं रह गया था। उन्हें यह भी याद न रहा कि उन्हें तुरंत उठ कर राजा के पास जाना है। आने वाली विपदा की सुध भी उन्हें न थी। यह देख कर अब सूरज भगवान से न रहा गया। उन्होंने तुरंत एक बूढ़े ब्राह्मण का वेष धर लिया और समुन्दर के किनारे तप करने वालों के बीच खड़े होकर कहा—"भाइयो! अब सब लोग ध्यान से जागो! हमें तुरन्त राजा के पास जाना है। मुझे उस गुप्त-वस्तु का पता भी लग गया है। अब समय ज्यादा नहीं बच रहा। चलो, तुरंत चलें।" यह कह कर उस बूढ़े ब्राह्मण ने सब को तप से जगाया और उन्हें साथ लेकर राजा के पास गया।

जैन लोग दरबार में कब के हाजिर हो गए थे। राजा और रानी भी ऊँचे आसनों पर बैठे हुए थे। सिर्फ ब्राह्मणों के आने की देर थी। अब तक ब्राह्मणों को आया न देख कर रानी चिन्ता में डूबी हुई थी। उसे सिर्फ अपनी बाजी हारने का ही सोच न था। उसे ज्यादा सोच यह था कि हार जाने पर ब्राह्मणों का सर्वनाश हो जाएगा।

राजा मन में फूला न समा रहा था। वह मन ही मन सोच रहा था—"ये ब्राह्मण लोग क्यों आएँगे अब? वे तो जान बचा कर कभी के भाग निकले होंगे। मैं तो पहले से ही जानता था कि उनको कुछ नहीं आता है।" इतने में ब्राह्मणों का दल दरबार में आ पहुँचा। उनको देखते ही राजा के मुँह पर काटो तो खून नहीं। पर रानी का मुँह खिल उठा। उसकी आँखों में आशा जगी।

ब्राह्मणों के आगे एक तेजस्वी बूढ़े को देख कर उसके मनको शांति पहुँची।

थोड़ी देर तक सारे दरबार में सन्नाटा छा गया। तब राजाने जैनों की तरफ देख कर पूछा—"क्या तुम हमारे प्रश्न का उत्तर देने को तैयार हो?" तब एक बूढ़े जैन ने उठ कर कहा—"महाराज! आपने एक मिट्टी के घड़े में एक सोने का साँप बंद कर उस घड़े को किले के फाटक पर गाड़ दिया है।" यह उत्तर सुनते ही राजा का मन बल्लियों उछल पड़ा। उसने कनखियों से रानी की तरफ देखा। मानों कह रहा हो 'देखा तुमने? मैं ही जीत गया!"

रानी अब आतुर होकर ब्राह्मणों की तरफ देखने लगी। उस आगे वाले तेजस्वी बूढ़े ने उठ कर कहा—"महाराज! इनका कहना असत्य है। आपने मिट्टी का घड़ा नहीं; तांबे की कलसी गाड़ दी है। उस में सोने का साँप नहीं; एक जिन्दा काला नाग बंद है। कलसी भी फाटक पर नहीं; बल्कि महल के पिछवाड़े गड़ी है। आपको मेरी बात पर विश्वास न हो तो खुद उस जगह खुदवा कर देख सकते हैं।" यह सुनते ही जैनों का दल स्तब्ध रह गया।

तब राजा सबको साथ लेकर किले के फाटक पर गया और वहाँ खुदवा कर देखा। लेकिन वहाँ मिट्टी का घड़ा कहाँ था? राजा को अपनी आँखों पर आप ही विश्वास न हुआ। उसने इसी जगह तो घड़ा गाड़ दिया था? जैन लोग आशंका से काँपने लगे। किसी तरह राजा ने अपने को सम्हाला और महल के पिछवाड़े जाकर ब्राह्मणों की कही हुई जगह पर खुदवाया। वहाँ मिट्टी के अन्दर एक तांबे की कलसी मिली। जब राजा ने उसका ढकना खुलवाया तो उसमें से एक काला नाग फुफकारते हुए बाहर आया। ब्राह्मणों की जीत हुई और जैन लोग हारे।

अब राजा को अपनी इच्छा के विरुद्ध ब्राह्मणों को बहुत से पुरस्कार आदि देकर उनके धर्म को राज-धर्म बना देना पड़ा। अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार उसे जैनों का नाश भी कर देना था। लेकिन रानी ने उन पर तरस खाकर कहा—"बेचारे जैन तो हार ही गए हैं। अब नाहक उनकी जान लेने से क्या फ़ायदा? इसलिए उन्हें छोड़ दीजिए।" लेकिन राजा ने उसकी बात न मानी। उसने कहा—"जब राजा ही अपनी प्रतिज्ञा का पालन न करेगा तो फिर प्रजा का क्या हाल होगा? नहीं! नहीं! चाहे जो भी हो मुझे तो अपनी भयङ्कर प्रतिज्ञा निभानी ही पड़ेगी।"

अब राज भर के जैनों को एक जगह कतार में खड़ा कर दिया गया। तब उनमें सब से ज्ञानी, बूढ़े अमरसिंह ने सोचा—"हाय! हमारे धर्म पर यह कैसा पहाड़ टूट पड़ा है? क्या दिव्य ज्ञान से भरे हुए हमारे शास्त्र यों ही नष्ट हो जायेंगे? नहीं! कभी नहीं!" यों सोचते सोचते सहसा उसे एक उपाय सूझ गया। उसने राजा के पास जाकर एक दिन का समय माँगा। राजा ने स्वीकार कर लिया और उन सब को तब तक एक जेल में बन्द रखने का हुक्म दे दिया। जेल में जाते ही अमरसिंह ने भोज पत्रों पर एक बड़ा ग्रन्थ लिखना शुरू किया। इस तरह वह दिन भर, रात भर लिखता ही रहा। एक दिन का समय बीत गया और राजा ने आकर जेल के दरवाजे खुलवाए। तब तक अमरसिंह का ग्रन्थ भी तैयार हो गया था। उसने उसे ले जाकर राजा के हाथ में रख दिया। राजा ने जब उस ग्रन्थ को उलट-पुलट कर देखा तो उसे इतनी खुशी हुई कि उसने तुरंत सब जैनों को रिहा करने का हुक्म दिया। अमरसिंह के नाम को अमर बनाने के लिए राजा ने उस ग्रन्थ का नाम 'अमर-कोष' रख दिया।

नागबती

श्रीनगर से बारह योजन की दूरी पर 'नगवाडीह' नामक एक टीला था। उस टीले पर एक जादूगर रहता था। उसके एक बड़ा भारी किला भी था। उस किले में सात चाँदी के और चौदह सोने के महल थे। उनके बीचों-बीच एक चार मीनारों वाली मसजिद थी। उस मसजिद में बैठ कर जादूगर अपनी जादू की कितावें उलटता रहता था। उसको बहुत से जंतर-मंतर मालूम थे। इसलिए सब तरह के भूत-प्रेत आदि उसका कहना मानते थे। सात सौ सफ़ेद भूत और तीन सौ करिया भूत उसका इशारा पाते ही हाथ जोड़ कर सामने आ खड़े हो जाते थे। वह जादूगर हमेशा एक फकीर का भेष बनाए रहता था। इसलिए सब लोग उसे भुतहा फकीर कहा करते थे।

फकीर ने चुटकी बजाई। तुरंत धोबी-भूत ने आकर मशाल जलाई। नाई-भूत ने आकर बाल बनाए। कुम्हार-भूत ने आकर खाना पकाया। ग्वाला-भूत दूध ले आया। कहार-भूत पानी ले आया। एक भूत आकर उसके पाँव सहलाने लगा। एक बूढ़ा भूत वहाँ बैठ कर कहानियाँ सुनाने लगा।

इतने में पूरब से एक पंछी और पच्छिम से एक पंछी आकर फकीर के सामने के पेड़ की डाल पर बैठ गए। तब फकीर ने अपनी रखेली प्यारीबाई को बुला कर कहा—"प्यारी! उन पंछियों को देख! जोड़ी कैसी अच्छी मिली है? बता, कौन उस तरह मेरी बगल में बैठ कर मेरा शौक पूरा करेगी?" बात यह थी कि प्यारीबाई अब बूढ़ी हो गई थी। इसलिए फकीर

के मन में यह इच्छा पैदा हो गई थी कि वह और एक सुन्दर युवती को हर लाए। इसलिए उसने एक काली बिल्ली को मार कर उसके भस्म से आँखों में अंजन साध कर चारों ओर देखा। लेकिन उसे कहीं अपने मन के लायक सुंदरी न मिली। इतने में उसकी नजर पश्चिम में बारह योजन की दूरी पर श्रीनगर के महलों में नागवती पर पड़ी। उसने तुरंत निश्चय कर लिया कि इसको हर लाना चाहिए। इसलिए वह उठ कर प्यारीबाई के साथ उसके महल में गया।

प्यारीबाई ने फकीर को आसन पर बिठाया। फिर उसने बारह मन गेहूँ की रोटियाँ और तीन मन मूँग की दाल पका कर फकीर के सामने रखी। फकीर तीन घड़े घी के साथ वह सब चट कर गया। फिर उसने तीस घडे शराब पी। लेकिन नशा नहीं चढ़ा। दो सेर अफीम खाई। लेकिन उससे भी कोई लाभ न निकला! तब वह चार बोरे गाँजा एक चिलम में डाल कर फूँकने लगा। इससे इतना धुँआ निकला कि कोई देखता तो समझता कहीं गाँव के गाँव जल रहे हैं। अब फकीर पर नशा चढ़ गया। उसकी आँखें

लाल हो गई। उसके मन में नागवती को हर लाने की इच्छा प्रबल हो गई। तब उसने कपड़े बदले और भड़कीली रेशमी पोशाक पहन ली। लेकिन आइने में अपना रूप देख कर उसने समझा कि इस भेष में मैं नागवती को नहीं हर ला सकता। तब उसने कमर में अँगोछा कस कर, काँख में पोथियाँ दबाईं और एक ब्राह्मण का वेष बनाया। लेकिन इससे भी उसे संतोष न हुआ। तब उसने तराजू हाथ में ले एक बनिए का वेष बनाया। लेकिन वह भी अच्छा न लगा। आखिर उसने कमर में में सुनहरा पटका कस कर बदन में भभूत रमाई, गले में रुद्राक्ष की माला पहनी और एक शिव-भक्त का वेष बनाया। एक हाथ में शंख और दूसरे में घंटा लिया। फिर कंधे से झोली लटका कर, उस में एक सोने की और एक चाँदी की छड़ी डाल कर श्रीनगर की ओर रवाना हुआ।

फकीर अपने जादू के बल से पलक मारते में श्रीनगर के किले पर जा पहुँचा। लेकिन वहाँ चौकीदार रामजतन ने उसे रोका और अंदर जाने नहीं दिया। उसने कहा—'अगर तुम भीख चाहते हो तो मैं ही तुम्हें दे दूँगा। लेकिन किले के अंदर

नहीं जाने दूँगा।' फकीर ने उसे बहुत समझाया। लेकिन रामजतन न माना।

आखिर फकीर ने गुस्से में आकर कहा--"रे मूर्ख! इसीलिए तू निस्संतान रह गया। अगर मैं चाहता तो तुझे संतान दे देता। क्योंकि मैंने ही नागवती को सात दिन पहले एक लड़का दिया था।" यह सुनते ही रामजतन के मन में उस कपटी शिव-भक्त के प्रति बड़ी श्रद्धा पैदा हो गई। उसने समझा कि स्वयं शिवजी उस रूप में आए हैं। उसने फकीर के पैरों पड़ कर क्षमा माँगी और विनती की--'आप मुझ पर भी कृपा करके संतान दीजिए।' तब फकीर ने अपनी झोली में से थोड़ी भभूत निकाल कर चौकीदार के हाथ में दे दी और कहा--"तुम यह भभूत ले जाकर थोड़ी सी अपनी स्त्री को खिला दो। बाकी अपने घर में सब जगह छिड़क दो।"

चौकीदार दौड़ता दौड़ता घर गया। उसने फकीर के कहे अनुसार किया। बस, अब क्या था! जिस जिस जगह भभूत पड़ी वहाँ वहाँ तुरंत बच्चे पैदा हो गए। जहाँ देखो वहीं बच्चे! छत पर बच्चे! दीवारों पर बच्चे! बाड़ी में बच्चे! आखिर कुएँ से भी बिलबिलाते बच्चे ऊपर रेंगने लगे। करीब तीन चार सौ बच्चों ने रोते-चीखते आकर रामजतन और उसकी स्त्री को घेर लिया। सब खाना माँग रहे थे। थोड़ी ही देर में उन्होंने घर में जो कुछ था सब चाट-पोंछ कर साफ कर दिया। फिर भी चिल्ला-चिल्ला कर खाना माँगते ही रहे। चौकीदार रामजतन के नाकों दम हो गया। वह किसी न किसी तरह उनसे पिंड छुड़ा कर फकीर के पैरों पर जा गिरा। "भाड़ में जाय यह संतान! मुझे इस राक्षसी संतान से बचाओ! मैं तुम्हें किले में जाने दूँगा।" उसने फकीर से कहा। फकीर ने फिर थोड़ी सी भभूत निकाल कर उसके हाथ में देकर कहा--"जा! पहले की तरह इसे भी

जगह जगह छिड़क दे! इस बार तू जितने बच्चे चाहेगा उतने ही बच रहेंगे।" रामजतन ने तुरंत घर जाकर वैसा ही किया। फकीर की कृपा से उसके सात बच्चे रहे। रामजतन की जान में जान आ गई। उसने बिना चूँ-चपड के फकीर को किले में प्रवेश करने दिया।

फकीर ने किले में जाकर देखा तो उसे नागवती की छहों बहनें घड़े लेकर पनघट पर जाती दिखाई दीं। नागवती उनके साथ नहीं थी। फकीर ने अपने जादू के बल से उनके घड़ों में अशर्फियाँ भर दीं। चकित होकर वे तुरंत घर लौट गईं। लेकिन घर जाने पर उन्हें अशर्फियों के बदले ठीकरे दिखाई दिए। फकीर ने बारी बारी से छहों बहनों के घर जाकर भीख माँग ली। वह चिल्ला कर कहता जाता था—"भगवान भूतनाथ की कृपा से दूधों-पूतों फूलो-फलो! भगवान की भभूत रमा लो! भूत-प्रेत सब भाग जाएँगे। जय शंकर! जय शंकर! हर हर बम!" यह कह कर वह जोर से शंख बजाता।

इसी तरह वह सारे किले में घूमता फिरता नागवती की ड्योढ़ी पर पहुँचा।

उसने एक बार जोर से शंख फूँक कर भीख माँगी। जब दासियाँ भीख डालने आयीं तो उसने कहा—"मैं दासियों के हाथ से भीख नहीं लेता। जाओ! मालिकिन को खुद अपने हाथ से भीख डालने को कहो।" जब दासियों ने कहा कि नागवती अभी बाहर नहीं आ सकती तो उसने कहा—"अच्छा! तो उसे इतना घमंड चढ़ गया है? क्या वह नहीं जानती कि मैंने उसे जो लड़का दिया है उसे जब चाहूँ तब छीन ले जा सकता हूँ?" दासियों ने डर के मारे यह बात नागवती से जाकर कह दी। तब नागवती ने सोचा कि महात्माओं के क्रोध से बच्चे का अनिष्ट हो सकता है। इसलिए वह खुद फकीर को भीख डालने चली। इतने में जब

उसका बच्चा जाग कर रोने लगा तो उसने उसका मन बहलाने के लिए अपनी अँगूठी निकाल कर उसकी नन्ही सी उँगली में पहना दी। फिर वह भीख लेकर बाहर आई। लेकिन फकीर ने भीख लेने से इनकार कर दिया। उसने कहा कि जब वह अपने पति की खींची हुई सातों लकीरें लाँघ कर बाहर आयगी तभी वह भीख लेगा। क्योंकि उन लकीरों का प्रभाव कुछ ऐसा था कि नागवती जब तक उन के अंदर रहती तब तक फकीर उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता था। नागवती भी उन लकीरों को पार करने में हिचकिचाने लगी। यह देख कर फकीर ने उसे फिर धमकाया कि 'मैं बच्चे को छीन ले जाऊँगा।' आखिर नागवती ने लाचार होकर उसकी बात मान ली। बस, अब क्या था? उसके लकीरों से बाहर आते ही फकीर ने उसे अपनी जादू की छड़ी से छुआ। तुरंत वह एक कुतिया के रूप में बदल कर अपने बच्चे के पालने के चारों ओर करुणस्वर से चिल्लाती हुई घूमने लगी। फकीर ने उसे डरा-धमका कर बाहर बुलाया और उसके गले में एक जंजीर बाँध कर अपने साथ ले चला।

लेकिन किले के फाटक पर रामजतन ने फिर उसे रोक लिया। उसे इस कुतिया को देख कर शक हो गया। उसने कहा—"अंदर जाते वक्त यह कुतिया तुम्हारे साथ नहीं थी। इसलिए मैं इसे तुम्हारे साथ नहीं जाने दे सकता।" फकीर ने उससे बहुत कुछ कहा-सुना। डराया-धमकाया भी। लेकिन वह टस से मस न हुआ। तब फकीर को गुस्सा आ गया और उसने थोड़ी सी भभूत निकाल कर चौकीदार के माथे पर छिड़क दी। तुरंत रामजतन पगला कर जंगल की ओर दौड़ा।

थोड़ी ही देर में फकीर अपने किले में पहुँच गया। वहाँ उसने अपनी झोली से

सोने की छड़ी निकाली और उससे कुतिया को छुआ। तुरंत चूड़ियाँ खनकाती, पायल झनकाती नागवती उसके सामने खड़ी हो गई। उसे देख फकीर ने उतावली के साथ उसका हाथ पकड़ना चाहा। लेकिन नागवती ने उसे रोक कर कहा—"रे फकीर! मैंने बारह बरस का व्रत लिया है। इसलिए व्रत पूरा होने तक तुम मुझे नहीं छू सकते। मैं तुम्हारे हाथ से तो किसी तरह निकल कर नहीं जा सकती। फिर तुम क्यों उतावले होते हो? याद रखो; अगर तुमने मेरी मर्जी के खिलाफ मुझे छुआ तो तुम्हारा सिर टूक टूक हो जाएगा। खबरदार!"

फकीर बड़ा भारी जादूगर तो था। लेकिन नागवती पतिव्रता थी। इसलिए उसके सामने इसका जादू बिलकुल नहीं चलता था। वह उसका बाल भी बाँका नहीं कर सकता था। थोड़ी देर बाद फकीर ने नागवती को छड़ी से छूकर उसे मुट्ठी भर राख में बदल डाला। फिर वह उस राख को अपनी झोली में छिपा कर प्यारीबाई के घर गया। प्यारी ने उसे अकेले लौटते देख कर समझा कि वह नागवती को हर नहीं ला सका। इसलिए अपना सा मुँह लेकर लौटा है। उसने उसकी दिल्लगी उड़ाई।

तब फकीर ने मुसकुरा कर झोली को अपनी सोने की छड़ी से छुआ। तुरंत चूड़ियों और नूपुरों की झंकार के साथ नागवती उठ खड़ी हुई। उसकी सुन्दरता से महल जगमगा उठा।

"हाय बिटिया! तुम इस हत्यारे के पंजे में कैसे फँस गई? न जाने, अब तुम्हारी क्या दशा होगी?" प्यारी ने नागवती को देख कर आँसू बहाते हुए कहा। बेचारी नागवती क्या जवाब देती? वह भी आँसू बहाने लगी। फकीर ने उसे मसजिद में ले जाकर कैद कर दिया। नागवती को बार बार अपने बच्चे की याद सताने लगी। वह अपने भाग्य को बहुत रोई। हाय! कौन उसके पति को जाकर बताए कि वह मसजिद में कैद है? [सशेष]

किसी गाँव में वक्र और शक्र नाम के दो भाई रहते थे। उनके गाँव से दो सौ मील की दूरी पर एक पहाड़ था। एक दिन दोनों भाइयों से किसी ने कहा कि "उस पहाड़ पर एक सोने की खान है। कुछ रुपया खर्च कर सात आठ महीने तक मेहनत करने से कोई भी वह सोना पा सकता है। हाँ, इसके लिए जरा लगन की जरूरत है।"

यह सुन कर दोनों में से बड़े ने जिसका नाम वक्र था, छोटे से कहा—"वाह! यह तो अच्छा मौका है। हम कुछ मजदूरों को साथ लेकर उस खान का पता लगाने क्यों न जाएँ? अगर हमारे भाग से सोना मिल गया तो फिर कहना ही क्या? मालामाल हो जाएँगे। फिर हमें जिन्दगी भर किसी चीज की कमी न रहेगी। बस, बैठे बैठे मौज उड़ाया करेंगे।" बड़ा भाई बड़ा आलसी जीव था। काम-धंधे से घबराता था। हमेशा अमीर बनने की आसान तरकीबें सोचा करता था। इसलिए सोने की खान का नाम सुनते ही उसके मुँह से लार टपकने लगी। लेकिन छोटे भाई का स्वभाव उससे एक दम उल्टा था। इसलिए सोने की खान के बारे में अपने भाई की उतावली देख कर भी उसके मन में कोई उत्साह नहीं पैदा हुआ। तो भी अपने बड़े भाई की बात न टाल सकने के कारण उसने सिर हिला कर हामी भर दी। अब दोनों भाई कुछ रुपया हाथ में ले मजदूरों के साथ गाँव छोड़ कर चले। वे कई मंजिलें तै करके एक महीने में उस पहाड़ के नजदीक जा पहुँचे। पहाड़ बहुत ऊँचा था। वक्र तुरंत मजदूरों के साथ पहाड़ पर चढ़ने लगा। लेकिन छोटे भाई ने वहीं रुक कर कहा—"भैया! मैं तुम्हारे साथ पहाड़ पर चढ़ कर क्या करूँगा? अच्छा हो यदि मैं यहीं नीचे रह जाऊँ। मैं यहाँ रह कर रखवाली

रामदेव
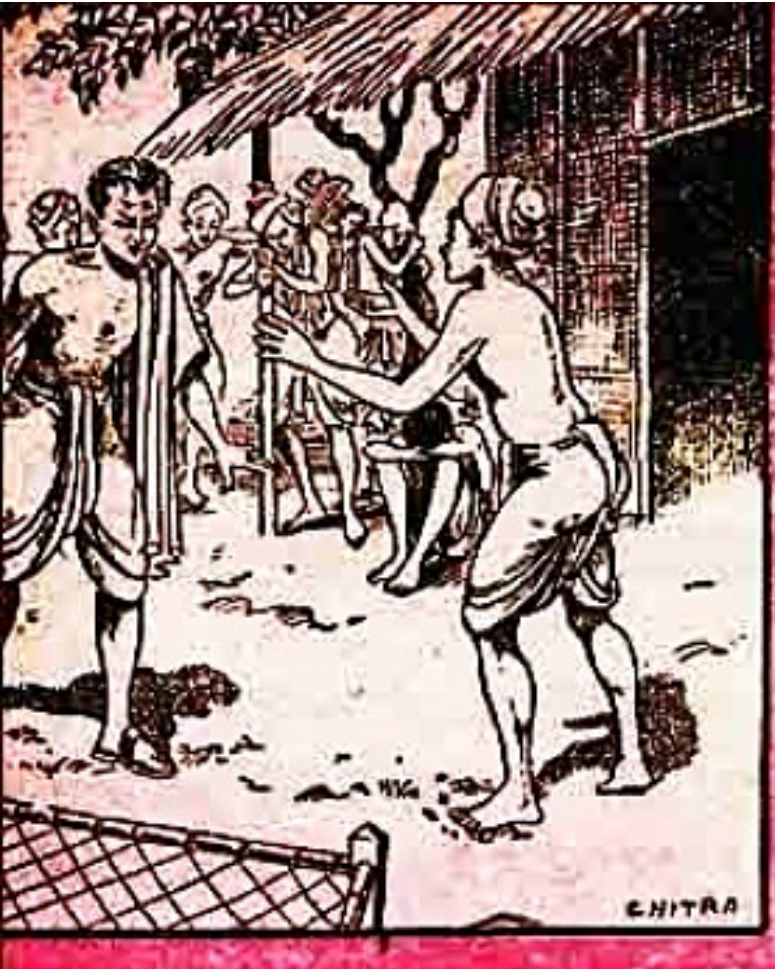
का काम करूँगा जिससे कोई पहाड़ पर आकर तुम्हारे काम में खलल न डाल सकें।" उसकी यह बात बक को भी अच्छी लगी। वह उसे वहीं छोड़ गया।

उस पहाड़ की तलहटी में एक गाँव था। शक ने थोड़े ही समय में गाँव-वालों से हेल-मेल कर लिया। उनकी सहायता से उसने पहाड़ के नीचे ही एक कुटिया भी बना ली। गाँव-वाले उससे बहुत प्रसन्न थे। इसलिए उसे किसी चीज़ की कमी न होने देते थे।

कुछ दिन बाद शक ने उस गाँव के जमींदार के पास जाकर कहा—"महाशय! मैं यहाँ बिलकुल बेकार रहा करता हूँ। इसलिए अगर आप अपनी जमीन में सात आठ बीघे मुझे खेती करने के लिए दीजिए तो बहुत अच्छा हो। फसल तैयार होते ही मैं आपका कर्ज अदा कर दूँगा।" यह सुन कर जमींदार ने खुशी के साथ उसकी इच्छा पूरी कर दी। इतना ही नहीं, बीज और खेती के सामान खरीदने के लिए उसने कुछ रुपए भी दिए।

अब शक ने दिन-रात अपने खेतों पर मेहनत करना शुरू किया। सुयोग से उस साल पानी भी समय पर बरसा और फसल अच्छी हुई। शक ने जमींदार साहब का कर्जा चुका दिया और उनके हिस्से का अनाज उन्हें दे दिया। तो भी उसके पास पचीस तीस बोरे अनाज के बच रहे। शक को इस तरह खेती में लगते देख कर गाँव वाले भी बहुत खुश हुए। शक ने अपना अनाज कुटी में रखवा लिया और अब मजे से दिन काटने लगा। तब तक उसके भाई को पहाड़ पर गए सात महीने बीत गए थे।

कुछ ही दिनों में पहाड़ पर बक का काम खतम हो गया। उसने सोने की खान का पता लगा कर बहुत सा सोना खोद लिया

था। लेकिन वे जो रसद वगैरह साथ ले गए थे वह कब की चुक गई थी। करीब एक महीने से वे आधे-पेट खाकर दिन बिता रहे थे। वक्र और उसके मजदूर सभी बहुत दुबले और कमजोर हो गए थे। आखिर उन्हें लाचार होकर नीचे उतरना पड़ा। राह में उनकी बड़ी बुरी हालत थी। वे सब भूख प्यास से इतने कमजोर हो गए थे कि कदम उठते न थे। तिस पर उन्हें सोना भी ढोकर ले जाना था। आखिर जब वक्र और उसके मजदूर पहाड़ से नीचे उतरे तो वे भूख के मारे अधमरे से हो गए थे। खाने की चीजें खरीदने के लिए उनके पास पैसे भी न बच रहे थे। उनके पास सोना तो था। लेकिन सोने से भी कहीं पेट की आग बुझती है? भूख से मरता हुआ आदमी सोना लेकर क्या करेगा? तब वक्र ने अपने भाई के पास जाकर सारा हाल कह सुनाया। उसके भाई ने कहा—"भैया! तुम लोगों को इस गाँव में खाना तो आसानी से मिल जायगा। लेकिन एक एक आदमी के भोजन का दाम एक एक सोने की डली होगी।" यह सुन कर वक्र को बड़ा क्रोध आया। उसने सोचा कि उसका भाई गाँव वालों के साथ मिल कर षडयन्त्र रच कर उसका सारा सोना हड़प लेना चाहता है। उसने बोरे खोल कर सारा सोना जमीन पर बिखेर दिया और कहा—"अच्छा भाई! हमारे पास जो कुछ है सब यही है। तुम इसे गाँव-वालों के साथ मिल कर बाँट लो और तुरंत हमारे भोजन का प्रबंध करो। इसके सिवा हम कर ही क्या सकते हैं! किसी तरह जान बचा लेंगे तो फिर आगे का हाल भगवान ही जानें।" इस तरह क्रोध में आकर उसने जो मन में आया कह दिया।

उसके छोटे भाई ने तुरंत अपना सारा अनाज निकाल कर सबके लिए रसोई बनाने का हुक्म दे दिया। जब तक वक्र और उसके साथी नहा-धोकर आए तब तक खाना पक गया। सबने बैठ कर खाना खाया। ऐसा खाना उन्हें महीनों से नसीब न हुआ था। भोजन हो जाने के बाद शक्र ने जब अपना सारा किस्सा कह सुनाया तो उसके बड़े भाई को बहुत अचरज हुआ। उसके बाद शक्र ने सारा सोना वापस दे दिया और कहा— 'भैया! तुमने नाहक मुझ पर शक किया। वास्तव में मैं तुमसे एक कानी कौड़ी भी नहीं चाहता। मैं अपनी मेहनत की रोटी आप ही कमा सकता हूँ।' यह सुन कर वक्र भी बहुत पछताने लगा। उसने अपने छोटे भाई की प्रशंसा करते हुए कहा—"भाई! मैंने इस सोने के पीछे व्यर्थ ही अपना सारा समय खराब किया। उससे तो यह काला सोना ही, यह धरती ही कहीं बढ़कर है। तुमने इसकी पूजा की। इसलिए तुम केवल अपना पेट ही नहीं पाल सके बल्कि हम सब की जान भी बचा सके। वास्तव में तुम्हारी कमाई ही सच्ची कमाई है।" अब दोनों भाई अपने गाँव लौट आए। वहाँ जाकर उन्होंने बहुत सी परती जमीन सरकार से माँग ली और खेती करना शुरू किया। अब वक्र ने भी अपनी मेहनत से जीने का पाठ अपने भाई के द्वारा सीख लिया था। कुछ ही दिनों में दोनों भाई बहुत धनवान बन गये और उनका नाम चारों ओर फैल गया। सभी किसान उन भाइयों को अपना आदर्श मानने लगे।

किसी समय एक राजा रहता था। वह प्रजा का अपनी संतान के समान पालन-पोषण किया करता था। इसलिए उस राज के सब लोग राजा को बहुत मानते थे। धीरे धीरे उस राजा का यश संसार के कोने कोने में फैल गया। दूर दूर से बड़े बड़े पंडित, संत, साधू और महात्मा लोग भ्रमण करते हुए उस राज में आने लगे। राजा भी ऐसे यात्रियों की बड़ी इज्जत करता था। जब तक वे उसके राज में रहते उनको कोई कमी या तकलीफ न होने पाती थी। राजा को ऐसे यात्रियों के दर्शन करने में और उनसे संसार के सभी देशों का हाल-चाल जानने में बड़ा आनंद आता था। वह बड़े चाव से उनके उपदेश सुनता और उन पर जरूर अमल करता। इस कारण उसकी प्रजा को नित नये सुख पहुँचते रहते थे। यहाँ तक कि उस राजा के शासन की बड़ाई में लोग उसे 'राम-राज' कहने लगे

लेकिन उस राजा के एक कुटिल मंत्री था। वह बड़ा कंजूस था। उसे रुपया-पैसा खर्च करना बिल्कुल पसंद न था। उसे साधू-संतों से बड़ी चिढ थी। उसकी राय में वे सब आलसी, निकम्मे जीव थे और उनकी सहायता करना बड़ा भारी पाप था।

एक बार एक साधू घूमते-फिरते उस राज में आ पहुँचा। राजा ने उस साधू को अपने दरबार में बुलाया और बड़े चाव से उसका उपदेश सुना। इस तरह दस-पंद्रह दिन बीत गए। दिन दिन उस साधू के प्रति राजा की श्रद्धा बढ़ती गई। आखिर राजा ने उस साधू से कहा—"स्वामीजी! मेरी इच्छा है कि आप कुछ वर्ष तक मेरे ही राज में रहें और अपनी संगति से हमें लाभ उठाने दें।" साधू ने भी राजा की बात मान ली।

कालूराम

जिस दिन से वह साधू राज में आया, राजा ने राज-काज में मन लगाना बिल्कुल छोड़ दिया। यह देख कर मंत्री को उस साधू से बहुत द्वेष हो गया। उसने निश्चय कर लिया कि अपनी चालाकी से किसी न किसी तरह इस साधू को राज से निकलवा देना चाहिए। इसलिए जहाँ कोई मौका मिलता वह राजा से साधू की शिकायत करने लगता। लेकिन राजा उसकी बात पर कान न देता। वह कहता—"तुम साधू-संतों की महिमा नहीं जानते। वे भगवान के अवतार होते हैं। उन्हीं के उपदेश से मनुष्य को मुक्ति का मार्ग दिखाई देता है।" उसने मंत्री को फटकार भी दिया। लेकिन मंत्री ने अपनी धुन न छोड़ी। उसी तरह राजा के मन में साधू के ऊपर द्वेष पैदा करने की कोशिश करता रहा। लेकिन इससे राजा के मन में साधू की इज्जत घटने के बदले और भी बढ़ गई।

आखिर मंत्री ने एक उपाय सोचा। उसने एक दिन एकांत में साधू से मिल कर उन्हें अपने घर खाने का न्योता दिया। भोला साधू उसके साथ गया। मंत्री ने उसका खूब सत्कार करके खाना परोसवाया। जब साधू खाने बैठा तो उसने कहा—'साधूजी! हमारे देश में लोग प्याज-लहसुन ज्यादा खाते हैं। खास कर दावतों में तो खाना ही पड़ता है। मैं आशा करता हूँ कि आपको उनसे कोई परहेज नहीं है।' तब साधू ने जवाब दिया कि उसे कोई परहेज नहीं। जब साधू खाना खाने लगा तो मंत्री चुपके वहाँ से खिसक गया और सीधे राजा के पास जाकर बोला—"हुजूर! मैं आपसे बहुत दिनों से कहता आ रहा हूँ कि यह साधू बड़ा पाखंडी है। लेकिन आप को मेरी बातों पर विश्वास न हुआ। आप उसे बड़ा भारी महात्मा समझते हैं। लेकिन वास्तव में उसके जैसा ढोंगी कोई नहीं है। न उसे लोकाचार का ध्यान है, न नीति-नियम का। चटोरा

ऐसा है कि खाद्य, अखाद्य सब खा जाता है। उस नीच की इतनी इज्जत करते देख कर सारा संसार आप पर हँस रहा है। देखिएगा न! आप को खुद मालूम हो जाएगा।"

यह कह कर वह घर लौट गया। इतने में वहाँ साधू का खाना हो गया था। वह वहाँ से जाने की तैयारी कर रहा था। इतने में मंत्री ने जाकर उससे कहा—"साधूजी! एक बात तो मैं आप से कहना भूल ही गया। अपने महाराज को प्याज-लहसुन से परहेज है। उन्हें उसकी गंध से ही मतली आने लगती है। इसलिए आज आप उनसे बातें करते समय जरा दूर पर बैठिएगा।" यह सुन कर साधू फिर दो तीन बार अच्छी तरह कुल्ला कर के राजा के पास गया। लेकिन मंत्री की बातें याद करके वह जरा दूरी पर ही बैठ गया। राजा से बातें करते वक्त भी उसने अपना मुँह दूसरी तरफ फेर लिया जिससे राजा को प्याज की गंध न लगे।

यह सब देख कर राजा को साधू पर शक हो गया। उसे अब मंत्री की बातों पर पूरा विश्वास हो गया। उसने सोचा—"वाह! साधूजी! तो आप डुबकी मार कर पानी पीते हैं! अच्छा, ठहरिए! मैं आपको इस छल के लिए अभी मजा चखाता हूँ।"

उस राज में राजा जिससे नाखुश हो जाता उसको दंड देने का उसने एक अच्छा उपाय कर रखा था। उसने अपने महल की एक ओर जमीन के अंदर एक तहखाना बनवा रखा था। वह जिसे दंड देना चाहता उसे एक पुरजी लिख कर दे देता। पुरजी में लिखा रहता कि इस आदमी को 'खूब ईनाम' दो। वह बेचारा खुशी से फूला फूला तहखाने में जाता। वहाँ सिपाही लोग उसको मौत का ईनाम देकर यमपुरी भेज देते। इस तहखाने का रहस्य राजा के सिवा और किसी को माळूम न था। यहाँ तक कि

मंत्री को भी नहीं। राजा ने साधू को इसी तहखाने में भेजने की सोची। उसने कहा—"साधूजी! आप को मेरे दरबार में आए बहुत दिन हो गए। लेकिन आपने मुझसे कभी कुछ नहीं माँगा। आज मैंने बिना माँगे ही आपको एक ईनाम देने का निश्चय कर लिया है। मैं आपको एक पुर्जी लिख कर दूँगा। आप उसे लेकर तहखाने में जाइए और अपना ईनाम पा लीजिए।" यह कह कर उसने साधू को पुर्जी लिख कर दे दी और तहखाने का रास्ता भी बता दिया।

साधू तहखाने की ओर चला तो रास्ते में मंत्री ने उसे रोक कर सारा हाल जान लिया। पुरजी देखते ही उसके मन में लालच पैदा हो गया। उसने साधू से कहा—"महात्माजी! सेवक के रहते आप क्यों व्यर्थ कष्ट उठाइएगा! आप यहीं बैठे रहिए। मैं अभी तहखाने में जाता हूँ और वह ईनाम लाकर आपको दे देता हूँ।" यह कह कर मंत्री ने साधू को वहीं बैठ कर राह देखने के लिए कहा और खुद पुर्जी लेकर तहखाने में पहुँचा। तहखाने के सिपाहियों ने पुर्जी पढ़ते ही मंत्री को तलवार के घाट उतार डाला। इधर साधू ने शाम तक मंत्री की राह देखी। लेकिन जब वह न आया तो उसने सीधे राजा के पास जाकर सारा हाल कह दिया। साधू को जिंदा लौट आया देख कर राजा के अचरज का ठिकाना न रहा। उसने साधू से मंत्री की पूरी कहानी सुन ली। अब मंत्री की सारी चालबाजी उसकी समझ में आ गई। उसे बड़ी खुशी हुई कि उसके हाथों एक निरपराध साधू की जान जाते जाते बची। उस दिन से उस साधू के प्रति उसकी श्रद्धा और भी बढ़ गई। उसने उसी को अपना मंत्री बना लिया और उसकी सलाह से राज में न्याय का पालन करने लगा।

बहुत पुरानी कहानी है। एक राजा था। देखने में उसका डील-डौल बड़ा अच्छा था; ऊंचा-तगड़ा, गोरा-चिट्टा। लेकिन वह बेचारा पढ़ने-लिखने में बिलकुल कोरा था। 'काला अक्षर भैंस बराबर।' यही नहीं, उसके मगज में बिलकुल भूसा भरा था। उसमें एक गँवार की जितनी भी सूझ-बूझ न थी। तिस पर वह परले दर्जे का हठी भी था। जो मन में आता, वही करता। दूसरों की सलाह लेने में वह अपनी हेठी समझता था। ऐसे आदमी को कोई क्या कह सकता है?

एक दिन वह राजा शिकार खेलने गया। वहाँ उसे एक बड़ा वनमानुष दिखाई दिया। वह आदमी के जितना ऊंचा था और आदमी ही की तरह खड़ा होकर चलता था।

जब वह बंदर शान के साथ धीरे धीरे कदम रखता हुआ चलने लगा तो बस, राजा मुँह बाए देखता खड़ा रह गया। वह ज्यों ज्यों उसे देखता था त्यों त्यों उसके मन में उसके ऊपर शौक बढ़ता जाता था। आखिर उसने सोचा—'ऐसा जानवर मेरे राज में क्यों नहीं है?' इसलिए उसने तुरंत सिपाहियों को हुक्म दिया—'जाओ! उस बंदर को पकड़ लाओ!' यह सुन कर सिपाहियों ने सोचा—'सचमुच राजा की बुद्धि मारी गई है! वीरता दिखाने के लिए बाघ या शेर को पकड़ लाया जा सकता है। माँस खाने के लिए मन मचल गया तो हरिण मार लाया जा सकता है। लेकिन बंदर पकड़ना! कौन ऐसा उल्लू होगा जो शिकार खेलने जाकर बंदर पकड़ता फिरे!' लेकिन वे करते क्या? राजा का हुक्म था। टाला नहीं जा सकता था। इसलिए उन्होंने उस बंदर को पकड़ा। राजा उसको लेकर नगर को लौट आया। महल में पहुँच कर राजा ने अपने मन्त्री को बुलाया और कहा—'मन्त्री! जरा

मोहन खुराना

इस बंदर की ओर देखो! यह नर से भी बलवान है। इसीलिए इसे वानर कहते हैं। जरा इसकी ओर तो देखो! कैसा गठीला जवान है? मेरी समझ में यह बड़ा बुद्धिमान भी जान पड़ता है। हम इसे अपने अखाड़े में ले जाकर तलवार चलाना, कुश्ती लड़ना वगैरह सिखाएँ तो यह आगे चल कर बड़ा वीर निकलेगा। इससे सचमुच हमारे दरबार की शोभा बढ़ेगी।' राजा के उत्साह का ठिकाना न था। पर राजा की बात सुन कर मन्त्री ने कहा—'महाराज! आपने जो कहा सो ठीक है। लेकिन बड़ों का कहना है कि लक्ष्मी का और बंदर की समझ का विश्वास नहीं करना चाहिए। अगर हम इस बंदर को कुश्ती लड़ना वगैरह सिखा कर इसके हाथ में एक तलवार दे देंगे तो फिर कौन जाने कि यह क्या करेगा? इसलिए मैं समझता हूँ कि इस वानरोत्तम को चिड़िया-घर में बंद रखना ही सबसे अच्छा होगा। तब लोग इसका तमाशा देख कर मन बहलाएँगे।' लेकिन उस मूर्ख राजा पर मन्त्री की बातों का कोई असर न हुआ। वह अपनी बात पर ही अड़ा रहा। आखिर मन्त्री ने लाचार होकर उस बंदर को अस्त्र-शस्त्र चलाने की शिक्षा देने के लिए एक उस्ताद को नियुक्त किया। वानर ने भी बड़ी होशियारी से थोड़े ही समय में सारी विद्याएँ सीख लीं।

कुछ दिन बाद राजा के मन में शौक पैदा हुआ कि 'देखें, हमारे वानर ने कहाँ तक हथियार चलाना सीखा है?' इसलिए उसने एक दिन उसकी परीक्षा लेने की ठहराई। उसने भरे दरबार में उस्ताद और शिष्य दोनों को बुला कर कहा—'उस्तादजी! हम आपके शिष्य का शस्त्र-कौशल देखना

चाहते हैं।' तब उस्ताद ने नजदीक के पेड़ के ऊपर एक चिड़िया की ओर इशारा करके बन्दर से कहा—'जाओ! उस चिड़िया का सिर काट लाओ!' गुरु की आज्ञा सुनते ही वह वानर दरबार से उठा और उछलता-कूदता पल में उस पेड़ पर चढ़ गया। उसने बड़े कौशल से तलवार निकाली और ऐसी सफाई से हाथ चलाया कि चिड़िया का सिर धड़ से जुदा होकर नीचे गिर पड़ा। उसकी होशियारी और फुर्ती देख कर सब लोग वाह-वाही करने और तालियाँ बजाने लगे। बस, अब राजा की खुशी का ठिकाना न रहा। उसने एक बार मन्त्री की तरफ मुसकुराते हुए देखा। मानों पूछ रहा हो कि 'मेरी बात ठीक निकली कि नहीं?' लेकिन मन्त्री ने सोचा कि कभी मेरा भी मौका आएगा और चुप रह गया।

दूसरे दिन राजा ने वानर को बेशकीमती कपड़े पहनाए। फिर उसने दरबार बुलाया। भरे दरबार में उसने अपने गले से मोतियों का हार निकाल कर बन्दर को पहना दिया और कहा—'मैं कल इस वानर की वीरता देख कर फूला न समाया। मैं इस वीर-पुरुष का उचित सत्कार करना चाहता हूँ। इसलिए इसे आज से मैं अपने शरीर-रक्षक के पद पर नियुक्त करता हूँ।' राजा की बातें सुनते ही सब लोग तालियाँ बजाने लगे और ईर्ष्या भरी नजरों से बन्दर की ओर देखने लगे।

लेकिन मन्त्री ने सोचा—'राजा मेरी बात सुने या न सुने। मुझे तो अपना धर्म निभाना ही होगा।' इसलिए उसने दरबार खतम होते ही जाकर राजा से कहा—

'महाराज! शरीर-रक्षक का पद बड़ा महत्त्वपूर्ण होता है। उसे हर वक्त अपने स्वामी के साथ रह कर बड़ी होशियारी से उसकी रक्षा करनी पड़ती है। क्योंकि राजाओं के चारों ओर बहुत से षडयन्त्र होते रहते हैं। क्या बन्दर ये सब काम कर सकता है? क्या उसमें इतनी समझ है? नहीं। इसलिए आप बन्दर को पुरस्कार भले ही दें; पर मेरी समझ में उसे अपना शरीर-रक्षक बनाना उचित नहीं जँचता।' लेकिन राजा ने उसकी एक न सुनी। उलटे उसे मन्त्री की बातों से गुस्सा आ गया। लाचार होकर मन्त्री ने उसे सलाह देना छोड़ दिया।

दिन दिन बन्दर पर राजा का प्रेम बढ़ता ही गया। वह जहाँ जाता उसे साथ ले जाता और बार बार उसका शस्त्र-कौशल देख कर मन बहलाता। वह दरबार में भी हमेशा उसी की प्रशंसा करता रहता। लोग भी राजा के शरीर-रक्षक को देख कर बहुत खुश हो रहे थे।

कुछ दिन बाद राजा का जन्म-दिन आया। उस दिन राज भर में उत्सव मनाया गया। दरबार में अनेक रईसों और उमरावों ने नजराने लाकर राजा की भेंट किए। एक फूल बेचने वाले ने फूलों का एक सुन्दर हार लाकर राजा की भेंट की। राजा को वह हार बहुत पसन्द आया। इसलिए उसने उसे अपने गले से नहीं निकाला।

थोड़ी देर बाद जब खेल-तमाशों से थका-माँदा राजा महल में लौटा तो वह माला पहने ही लेट गया। नींद के मारे आँखें मुँदी जाती थीं। इसलिए उसने अपने शरीर-रक्षक को बुला कर कहा—"मैं थोड़ी देर आराम करना चाहता हूँ। इसलिए तुम दरवाजे पर पहरा देते रहना और किसी को अन्दर न आने देना।" यह कह कर राजा ने आँखें मूँद लीं और तुरंत खुर्राटे लेने लगा।

राजा के आज्ञानुसार शरीर-रक्षक दरवाजे पर पहरा देता रहा। राजा के आराम में खलल डालने के लिए वहाँ कोई नहीं आया। लेकिन फूलों की गन्ध से खिंच कर एक भौंरा कहीं से झंकार करते हुए आया।

शरीर-रक्षक ने उस भौंरे को बहुत रोका। लेकिन वह किसी न किसी तरह उससे बच कर कमरे में घुसा और राजा के गले में फूलों के हार पर जा बैठा।

अब उस वीर वानर को भौंरे पर बड़ा क्रोध आया। उसने सोचा—"किस की मजाल है कि मेरे यहाँ रहते राजा के कमरे में प्रवेश कर जाय और राजा की आज्ञा का उल्लंघन करे?" यह सोच कर वह एक छलांग में अन्दर चला गया और तलवार निकाल कर एक ही वार में उसने राजा के गले पर बैठे हुए भौंरे के दो टूक कर दिए।

शरीर-रक्षक की तलवार की वार से भौंरे के साथ-साथ बेचारे राजा का सिर भी धड़ से अलग हो गया! सारा बिछौना उसके गरमागरम लहू से तर हो गया!

वह बन्दर फिर जाकर प्रसन्न-चित्त से दरवाजे पर पहरा देने लगा। उसने राजा की आज्ञा का पालन किया था। और क्या चाहिए!

उसने यह नहीं सोचा कि उसकी बेवकूफी के कारण राजा की जान चली गई है। कहने का मतलब है कि मूर्ख नौकर के कारण मालिक की जान भी खतरे में पड़ जाती है। बड़ों की बात माननी चाहिए। हठधर्मी से नुकसान ही नुकसान है। राजा ने अगर मन्त्री की बात मान ली होती तो नाहक उसकी जान न जाती। इसलिए बचो! कभी मूर्खता-पूर्वक हठ न करो!

पुराने जमाने में उल्लू-भाई आज की तरह रोशनी देख कर भागते न थे। उस समय वे भी बाकी सभी पंछियों की तरह दिन भर चारा ढूँढ़ते फिरते और रात को अपने घोंसले में आराम करते। अब शायद आप पूछेंगे कि आजकल वे क्यों दिन में चोरों की तरह दुबक रहते हैं और रात में मौज से घूमते-फिरते हैं! इसके बारे में एक दिलचस्प कहानी है। जरा कान लगा कर सुनिए।

उन दिनों में जब वे दिन में बाहर निकला करते थे, उल्लू-भाई एक दिन जंगल की सैर करने चले। वे उड़ते हुए जाकर एक पेड़ की डाल पर सुस्ताने के लिए बैठ गए। इतने में एक शिकारी ने उन्हें देख लिया और उन पर तीर का निशाना लगा कर मारा। तीर जरा चूक गया। इसलिए उल्लू-भाई की जान बच गई। पर वे घायल होकर नीचे की झाड़ी में गिर पड़े। शिकारी ने चारों ओर उन्हें ढूँढ़ा। लेकिन जब वे नहीं मिले तो हताश होकर घर लौट गया।

थोड़ी देर बाद झाड़ी में पड़े उल्लू-भाई को जरा होश आया। जान तो बच गई थी। लेकिन अब वे दर्द के मारे चीखने लगे। कागलाल ने जब उनका कराहना सुना तो उसको उन पर तरस आई। उसने सोचा—'हरेक आदमी पर कभी न कभी मुसीबत टूट ही पड़ती है। इसलिए मुसीबत में हमें एक दूसरे की मदद करनी चाहिए।' यह सोच कर वह उल्लू-भाई को उठवा कर डाक्टर कोकिलराम के अस्पताल में ले गया और वहाँ भर्ती करा दिया। डाक्टर कोकिल-राम को उल्लू-भाई का सब हाल मालूम था। वह जानता था कि वे बड़े भारी कंजूस हैं। उसे मालूम था कि ऐसे लोग मुसीबत

लता देवी

में फँस कर गिड़गिड़ाते हैं। मगर समय पर चकमा देने से बाज नहीं आते। डाक्टर ने ऐसे मरीजों को बहुतों को देखा था जो चंगे हो जाने के बाद फीस चुकाए बिना चले गए थे। इसलिए उसने उल्लू को भर्ती करते समय कागलाल से कहा—'प्यारे दोस्त! तुम बहुत भोले-भाले हो। तुम समझते हो कि मीठी बातें करने वाले सभी भले आदमी हैं। दुनिया का रंग-ढंग तुम नहीं जानते। लेकिन मैं उल्लू-भाई को खूब जानता हूँ। मेरी समझ में उनसे किसी तरह का लगाव नहीं रखना चाहिए। मेरी तुमसे पुरानी दोस्ती है। इसलिए मैंने यह तुमसे कह दिया।' लेकिन कौए को अपनी बात से मुकर जाना पसंद नहीं था। उसने कहा—'डाक्टर! शायद तुम्हारा कहना ठीक है। लेकिन मैं उल्लू से पहले ही वादा कर चुका हूँ कि मैं उसका इलाज कराऊँगा। इसलिए मैं अब उसे निराश नहीं कर सकता। अगर उल्लू ने तुम्हें धोखा दिया तो उसकी जिम्मेदारी मुझ पर होगी। तुम इलाज करो। मैं उसका जमानतदार बनता हूँ।'

आखिर डाक्टर को लाचार होकर उल्लू का इलाज करना पड़ा। उसकी कृपा से उल्लू-भाई थोड़े ही दिनों में पूरी तरह अच्छे हो गए। लेकिन जब डाक्टर की फीस देने का समय आया तो उल्लू को शैतानी सूझी। वे एक रात चुपके से उठ कर चंपत हो गए। सबेरे डाक्टर कोकिलराम ने आकर देखा तो मरीज की खाट खाली पड़ी थी। तब डाक्टर ने कागलाल को बुला भेजा। उल्लू की बेईमानी की बात सुन कर कौए का मुँह सफेद फक हो गया। वह मन ही

मन पछताने लगा कि मैंने डाक्टर की बात क्यों न मानी? उसके भोले हृदय को यह जान कर बड़ा धक्का लगा कि संसार में ऐसे ऐसे बेईमान और कृतघ्न जीव भी रहते हैं।

उसने अपने दोस्त डाक्टर से कहा—'डाक्टर! जो हो गया सो हो गया। तुमको मेरे कारण व्यर्थ कष्ट उठाना पड़ा। इसके लिए मैं बहुत दुखी हूँ। उल्लू के इलाज में कितना खर्चा लगा है बता दो। मैं चुका दूँगा।' यह सुन कर डाक्टर कोकिलराम घर के अन्दर गया और अपनी बीबी से सलाह-मशविरा किया। थोड़ी देर बाद उसने बाहर आकर कौए से कहा—"दोस्त! तुमने भलाई के बदले बुराई पाई। लेकिन इसमें तुम्हारा क्या दोष था? तुम बहुत भोले-भाले हो। सहज ही लोगों पर विश्वास कर लेते हो। इसीलिए मैंने तुम्हें पहले ही चेता दिया था। लेकिन तुम न माने। तुम कहते हो कि उल्लू की फीस मैं चुका दूँगा। लेकिन मैं एक दोस्त के नाते तुमसे यह फीस नहीं ले सकता। हाँ, मैं कोई ऐसा काम जरूर करना चाहता हूँ जिससे दुनिया को उल्लू की कृतघ्नता की कहानी हमेशा याद रहे। इसके लिए मैंने अपनी बीबी के साथ सोच-विचार कर एक निश्चय किया है। मेरी बीबी अपने अंडे तुम्हारे घोंसले में रख देगी। तुमको उन्हें सेकर बच्चे बनवाने पड़ेंगे। लोग इस घटना को देख कर हमेशा अचरज करेंगे। इस तरह उन्हें उल्लू की कहानी भी हमेशा याद रहेगी।" कागलाल ने भी बड़ी खुशी से कोकिलराम की बात मंजूर कर ली।

उसके बाद से उल्लू-भाई कभी दिन में बाहर नहीं निकलते हैं। कभी वे भूले-भटके बाहर आ भी जाते हैं तो कौआ उन्हें चोंच मार कर दूर भगा देता है।

मुखलिंगेश्वर

बहुत दिनों की बात है। आंध्र-प्रदेश के उत्तर में एक घना जंगल था। उस जंगल में एक भील एक छोटी सी झोंपड़ी बना कर रहा करता था। उसके दो स्त्रियाँ थीं। बड़ी स्त्री बहुत सुशीला और गुणवती थी। लेकिन छोटी बहुत झगड़ालू थी। क्रोध, द्वेष और ईर्ष्या आदि दुर्गुण उसमें कूट कूट कर भरे हुए थे। वह अपनी सौत को बहुत तंग करती थी। बात बात पर झगड़ती थी। लेकिन बड़ी स्त्री बहुत शाँत-स्वभाव की थी। इसलिए उसे वह कुछ नहीं कहती थी। इससे छोटी की शैतानी दिन-दिन और भी बढ़ती गई। अपनी सौत को दबते देख वह दिन दिन और भी सिर चढ़ने लगी। वह अब हरेक बात में जिद्द करने लगी और अपने पति से उसकी शिकायत करने और चुगली खाने लगी।

इस तरह दोनों में दिन दिन अनबन बढ़ती गई। घर में हर वक्त कुहराम मचा रहता था। इनके मारे आखिर भील की नाकों दम हो गया। इसलिए उसने अपनी झोंपड़ी को दो हिस्सों में बाँट दिया। पूरब वाले हिस्से में बड़ी औरत और पश्चिम के हिस्से में छोटी रहने लगी। अब वह खुद बारी बारी से दोनों के घर में एक एक दिन रहने लगा।

भील की बाड़ी में एक बेल और एक पारिजात सट कर बढ़े और बहुत बड़े पेड़ बन गए। जब इस घर के दो हिस्से कर दिए गए तो पेड़ ठीक दोनों के बीचों-बीच आ गया। इसलिए दोनों पत्नियाँ अपने अपने हिस्से की डालों से फूल तोड़ लिया करती थीं। भील ने सोचा—"चलो, यह भी अच्छा ही

अमरलाल

की पत्तियाँ महादेव पर चढ़ाई जाती हैं और पारिजात के फूल भगवान विष्णु को बहुत प्यारे हैं। बचपन में ही उसने इसके बारे में बड़े-बूढ़ों से कई कहानियाँ सुनी थीं। इसलिए वह उस पेड़ के नीचे रोज बुहार कर पानी छिड़क देती थी। वह उस जगह को हमेशा साफ बनाए रखती थी और रोज बड़ी भक्ति से उस पेड़ की पूजा करती थी।

लेकिन छोटी की न भगवान में भक्ति थी और न अपने पति में। तिस पर वह बड़ी आलसी भी थी। इसलिए घर में झाड़ू देने के बाद वह सारा कूड़ा-करकट बटोर कर उस पेड़ के नीचे डाल देती थी।

कुछ दिन बाद भगवान की कृपा से बड़ी औरत के हिस्से वाली डालियों पर रोज सोने के फूल फूलने लगे। लेकिन छोटी औरत के हिस्से में वही मामूली पारिजात के फूल फूलते थे। सोने के फूलों के कारण बड़ी औरत कुछ ही दिनों में बहुत धनवती बन गई।

यों कुछ दिन बीत गए। छोटी औरत को पता चल गया कि उसकी सौत के हिस्से

हुआ। अब तो पेड़ का भी बँटवारा हो गया है। अब इन दोनों को झगड़ने का कोई मौका न मिलेगा।" वह अब आशा करने लगा कि कुछ दिन तक उसके घर की शाँति भंग न होगी।

लेकिन छोटी औरत के हृदय में ईर्ष्या की आग जलती ही रही। वह अब भी बड़ी को देख कर जला करती थी। वह हर दम अपनी सौत से झगड़ने का, उसे तंग करने का मौका ढूँढ़ती रहती थी।

भील की बड़ी औरत भगवान में बड़ी भक्ति रखती थी। वह जानती थी कि बेल

वाली डालों पर सोने के फूल खिल रहे हैं। उसने सोचा कि उसके पति ने उसे धोखा दिया है और जान-बूझ कर यह हिस्सा उसको दिया है, जिससे सोने के फूल उसकी सौत को मिलें। इसलिए उस दिन जब उसका पति घर आया तो उसने कहा—'मुझे इस घर का पूरब वाला हिस्सा चाहिए।' बेचारे भील को सोने के फूलों की बात कैसे मालूम होती! इसलिए उसने कहा—'अच्छा! अगर तुम पूरब वाला हिस्सा चाहती हो तो वही ले लो। इसमें क्या धरा है।' उसने तुरंत बड़ी औरत से यह बात कह दी। वह बेचारी गऊ सी सीधी थी। तुरंत राजी हो गई। अब बड़ी औरत पश्चिम वाले हिस्से में आकर रहने लगी। उसने आते ही तुरंत पेड़ के नीचे झाड़-बुहार कर साफ कर दिया और रोज उस पेड़ की पूजा करने लगी। दूसरे ही दिन से उसके हिस्से में फिर सोने के फूल फूलने लगे। इधर छोटी औरत ने पति से झगड़ कर पूरब वाला हिस्सा तो माँग लिया। लेकिन यहाँ भी उसका पुराना ढंग जारी रहा। वह अपनी आदत के मुताबिक घर का सारा कूड़ा-करकट जमा कर पेड़ के नीचे डाल देती। इसलिए उसके आते ही पूरब वाले हिस्से में सोने के फूल लगना बंद हो गया।
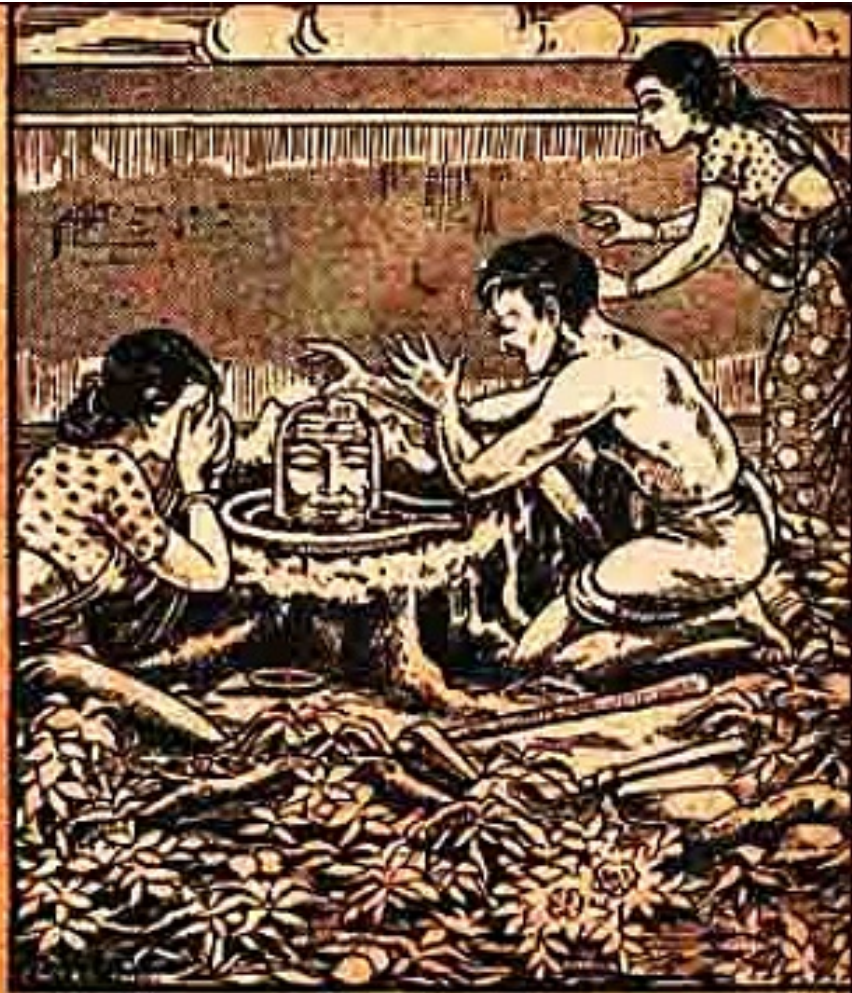
दो तीन दिन बाद छोटी को फिर मालूम हुआ कि इस बार पश्चिम के हिस्से में सोने के फूल लगने लगे हैं। उसने अपनी आँखों से यह एक बार देख भी लिया। वह फिर डाह से जलने लगी। इसलिए उसने

अपने पति को बुला कर कहा कि ‘ चाहे जिस तरह हो, मुझे वे सोने के फूल रोज़ ला दिया करो।’ अब बेचारा भील क्या करे? उसे चोरी करना बिल्कुल पसंद नहीं था। इसलिए उसने उससे साफ़ कह दिया कि यह काम उससे नहीं होगा। मगर छोटी स्त्री रोज उसे तंग करने लगी। आखिर नाकों दम होकर भील ने सोचा कि ‘ यह पेड़ ही सारे झगड़ों का मूल है।’ यह सोच कर उसने एक दिन एक कुल्हाड़ी ली और उस पेड़ को जड़ से काट डाला। दोनों पेड़ हहरा कर गिर पड़े। इतने में उस भील ने देखा कि दोनों पेड़ों के तनों के बीच में खून की पतली धारा बह रही है। उसको बड़ा आश्चर्य हुआ। पेड़ के तनों में से यह खून की धारा कैसे बह रही है? उसने गौर से तनों के चारों ओर देखा। लेकिन कुछ न दीख पड़ा। तब उसने एक कुदाल लाकर तने के नीचे खोद कर देखा। तुरन्त ‘हाय! हाय! मैंने देवता पर कुल्हाड़ी चला दी!’ यह कह कर चिल्लाते हुए वह झोंपड़ी की ओर भागा। उसकी चिल्लाहट सुन कर उसकी दोनों औरतों ने बाहर आकर देखा।

उस पेड़ के तने में शिवजी का एक लिंग था। उसके आदमी की तरह ही नाक, कान, आँखें, मुँह वगैरह सब कुछ थे। उसके सिर पर जिस जगह कुल्हाड़ी लगी थी वहाँ कट गया था और उसमें से खून बह रहा था। यह देख कर भील बहुत पछताने लगा। उसने और उसकी पत्नी दोनों ने मिल कर वह घाव धोया। फिर भील ने जंगल से जड़ी-बूटियाँ लाकर उनका रस निकाल कर, उस घाव पर लगाया।

वह भील अब मन ही मन डरने लगा कि इस अपराध की उसे न जाने क्या सजा मिलेगी! उस रात बेचारे को बिल्कुल नींद न आई। आखिर रात के चौथे पहर उसकी आँखें झपक गईं तो उसने एक सपना देखा। सपने में महादेव उससे कह रहे थे—"रे भील! तुम डरो मत! तुमने यह अपराध अनजान में किया। इसमें तुम्हारा क्या दोष था! अब मैं चाहता हूँ कि तुम कल ही सवेरे यहाँ से चले जाओ। उसके बाद तुम इस जंगल के निकट वाले शहर के राजा से यह सारा हाल कह सुनाओ। इससे तुम्हारे सारे संकट दूर हो जाएँगे।" यह कह कर वे अन्तर्धान हो गए। थोड़ी देर बाद भील आँखें मलते हुए उठा और अपनी दोनों स्त्रियों को भी जगाया। जब उसने उन्हें अपने सपने का हाल सुनाया तो वे भी अचरज में पड़ गईं। तिस पर उसकी बड़ी स्त्री को ऐसी बातों पर बड़ा विश्वास था। इसलिए उसने अपने पति से अनुरोध किया कि 'चलो, यहाँ से जल्दी चले जाएँ।' भगवान की आज्ञा वह थोड़ी देर के लिए भी टालना न चाहती थी।

सवेरा होते ही भील अपनी दोनों स्त्रियों को साथ ले एक दूसरे जंगल में रहने चला गया। इस विचित्र घटना का वृत्तांत सुनाने के लिए वह दूसरे ही दिन शहर की ओर दौड़ा।

सारे शहर में भील की कहानी एक कान से दूसरे कान में फैल गई। जहाँ देखो वहीं इसकी चर्चा होने लगी। कुछ लोगों ने किले में जाकर राजा से भी यह बात कही।

उनकी बात सुन कर राजा को भी बड़ा अचरज हुआ। उस अद्भुत शिवलिंग का दर्शन करने के लिए राजा अपने परिवार सहित राजधानी से चला।

उस जंगल के नजदीक 'वंशधारा' नामक एक नदी बहती थी। उसके तट पर भीलों की एक छोटी सी बस्ती थी। राजा ने वहाँ जाकर उस शिवलिंग के बारे में पूछ-ताछ की। उन्होंने कहा कि 'हाँ, ऐसा एक लिंग उसी जंगल में है।' तब राजा ने पूछा कि 'वह स्थान यहाँ से कितनी दूर है?'

तब उन्होंने बताया—"महाराज! वह जगह यहाँ से दूर नहीं है। सिर्फ दो मील के फासले पर है। उधर देखिए न! वह जो शिखर दिखाई देता है वह उसी देव-मंदिर का है।" राजा ने जब उस ओर देखा तो वह शिखर सुनहली धूप में सोने का सा चमक रहा था। यह देख कर सब लोग दाँतों तले उँगली दबाने लगे। रातों-रात यह मंदिर कैसे तैयार हो गया!

राजा ने उस गाँव वालों से पूछा— 'यह मंदिर किसने बनवाया है?'

'महाराज! यह तो हम नहीं जानते। रात भर हमें उस जगह भारी रोशनी दिखाई पड़ी। साथ ही बहुत से लोगों के घूमने-फिरने और बातें करने की हलचल सुनाई दी। तमाशा देखने के लिए हम सब उस ओर गए। लेकिन राह में हमें बहुत से बाघ, शेर, भालू आदि जंगली जानवर दिखाई दिए। उनके डर के मारे हम आगे न बढ़ सके। हम सब घर लौट आए। जब हमने सबेरे उठ कर देखा तो वह मंदिर दिखाई दिया। रातों-रात मंदिर तैयार करना क्या आदमी के लिए

मुमकिन है! इसलिए हमने समझा कि यह मंदिर खुद देवताओं ने बनाया है। हम उसके बारे में इतना ही जानते हैं।" उन्होंने कहा। यह सुन कर सबका आश्चर्य और भी बढ़ गया। वे जल्दी जल्दी नदी पार कर मंदिर के निकट गए। उस मंदिर के पीछे 'वंशधारा' नदी बहती थी। उसमें नहा-धोकर सबने मंदिर में प्रवेश किया। ऊपर चाँदी के दो चिरागदानों में दीप जल रहे थे। उस प्रकाश में उन्होंने मनुष्य के से मुँह वाले उस शिवलिंग को देखा। उसके सिर पर उन्हें एक छोटा सा घाव भी दिखाई दिया। तब उन्होंने जान लिया कि वही घाव भील की कुल्हाड़ी की चोट से हुआ है। लेकिन उन्हें आस-पास कहीं बेल या पारिजात का पेड़, या भील की झोंपड़ी नहीं दिखाई दी। तब उस राजा ने पंडितों की सलाह लेकर उस देवता का नाम 'मुखलिंगेश्वर' रखा। क्योंकि उस लिंग का मुँह ठीक आदमी की तरह था। फिर सब लोगों ने मिल कर बड़ी भक्ति के साथ उस देवता की पूजा की।

दूसरे दिन राजा ने उस भील को बहुत सा धन दिया। क्योंकि उस भील के द्वारा ही सब लोगों को उसका पता चला था।

तब भील को अपने स्वप्न में ईश्वर की बातें याद आईं। उसने सोचा कि यह सब उस देवता की कृपा है। उस दिन से ईश्वर पर उसकी भक्ति और भी बढ़ गई।

मंदिर बना-बनाया हुआ था। इसलिए राजा ने पूजा करने के लिए पुजारियों की नियुक्ति की। उन पुजारियों के लिए उसने वहाँ घर भी बनवा दिए। धीरे धीरे वहाँ एक

गाँव बस गया। राजा ने उस गाँव का नाम 'मुखलिंगपुर' रख दिया।

जिस जगह पहले उस भील की झोंपड़ी थी ठीक उसी जगह शिवजी का मंदिर उठ खड़ा हुआ। आज भी उस जगह बड़ी धूम-धाम से पूजा होती है। बड़े प्रेम से अभिषेक होता है। हर साल महाशिवरात्रि के दिन वहाँ बड़ा भारी उत्सव होता है और वहाँ बहुत से लोग दूर दूर से आते हैं।

* * *

कुछ दिन बाद वहाँ जमीन जोतने वालों और कुँए खोदने वालों को मिट्टी में जगह जगह बहुत से शिवलिंग मिलने लगे। उस गाँव के चारों ओर जहाँ देखो वहाँ शिवलिंग ही शिवलिंग थे।

तब लोग किसी को 'सोमेश्वर', किसी को 'भीमेश्वर' आदि नामों से पुकारने लगे और उनके लिए मंदिर भी बनवाने लगे। आज भी जब हम वहाँ जाते हैं तो हमें वंशधारा नदी के किनारे खेतों में, बगीचों में जगह जगह शिवलिंग पड़े दिखाई देते हैं। लोगों का कहना है कि वहाँ एक कम करोड़ शिवलिंग हैं। मगर उस तीर्थ में वंशधारा नदी मंदिर के पीछे से होकर बहती है। यह एक बड़ा दोष माना जाता है। नहीं तो कहा जाता है कि उस क्षेत्र का काशी के समान ही महत्व होता। वहाँ के लोग अब भी विश्वास करते हैं कि तीन साल लगातार मुखलिंगेश्वर के दर्शन करने से काशी-विश्वेश्वर के दर्शन करने का फल मिलता है और तीन वर्ष लगातार वंशधारा में गोते लगाने से गंगा नहाने का फल मिलता है।

बच्चो! अगर तुम भी बिना काशी-यात्रा के ही काशी जी जाने का पुण्य प्राप्त करना चाहते हो तो यह अच्छा मौका है। जाओ! मुखलिंगेश्वर के दर्शन करके वंशधारा में डुबकियाँ लगा आओ!
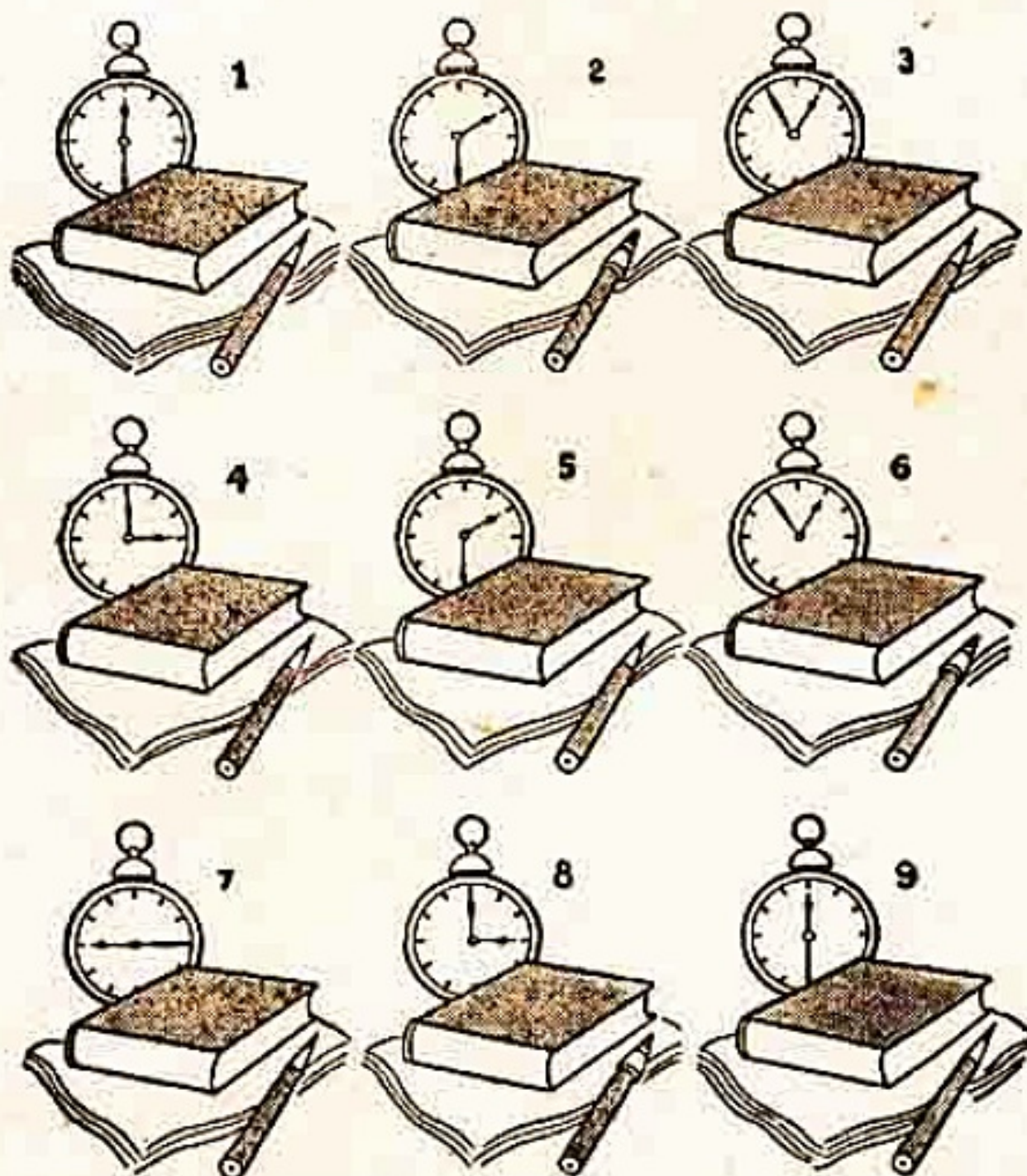
ऊपर के नौ चित्रों में सब एक से दिखाई देते हैं। लेकिन वास्तव में नहीं हैं। उनमें सिर्फ़ दो एक से हैं। बताओ तो देखें, वे दोनों कौन से हैं? अगर न बता सको तो जवाब के लिए ५१-वाँ पृष्ठ देखो।

सदाचार

'सदाचार' का माने होता है अच्छा बर्ताव। स्वास्थ्य के साधनों में सदाचार का प्रमुख स्थान है। कुछ लोगों को यह सुन कर बड़ा आश्चर्य होता है कि सदाचार और स्वास्थ्य में कुछ संबन्ध है। सदाचार में उनका विश्वास नहीं रहता। इसीलिए वे उसकी ओर उतना ध्यान नहीं देते। अनुचित आहार से शरीर को जितनी हानि पहुँचती है उस से भी ज्यादा अनुचित आचार से पहुँचती है। अनाचारी लोगों के मन में कभी शांति नहीं रहती। इसीलिए बड़ों का कहना है कि जहाँ पाप है वहीं भय भी है।

भय अनेक चिंताओं और व्याधियों का कारण होता है। यह निस्सन्देह कहा जा सकता है कि भय से बढ़कर मनुष्य का कोई शत्रु नहीं है। इसलिए हमें ऐसा कोई काम नहीं करना चाहिए जिसके कारण पीछे हमारे मन में भय उत्पन्न हो। बड़ों को चाहिए कि वे बच्चों के मन में यह बात अच्छी तरह बैठा दें।

सदाचार से सिर्फ मनुष्य का शारीरिक-बल ही नहीं; आत्म-बल भी बढ़ता है। महान कार्य करने के लिए मनुष्य को शारीरिक-बल से ज्यादा आत्म-बल की आवश्यकता पड़ती है। सदाचार के बिना आत्म-बल नहीं पाया जा सकता। इसीलिए सभी महान पुरुषों ने सदाचार पर जोर दिया है।

जो तन-मन से स्वस्थ रहना चाहते हैं उन्हें सदाचार पर विशेष ध्यान देना चाहिए। किसी ने कहा भी है—'धन खोने से थोड़ी हानि होती है। स्वास्थ्य खोने से और थोड़ी हानि होती है। लेकिन सदाचार खोने से सर्वनाश हो जाता है।'

तुम्हारी दीदी
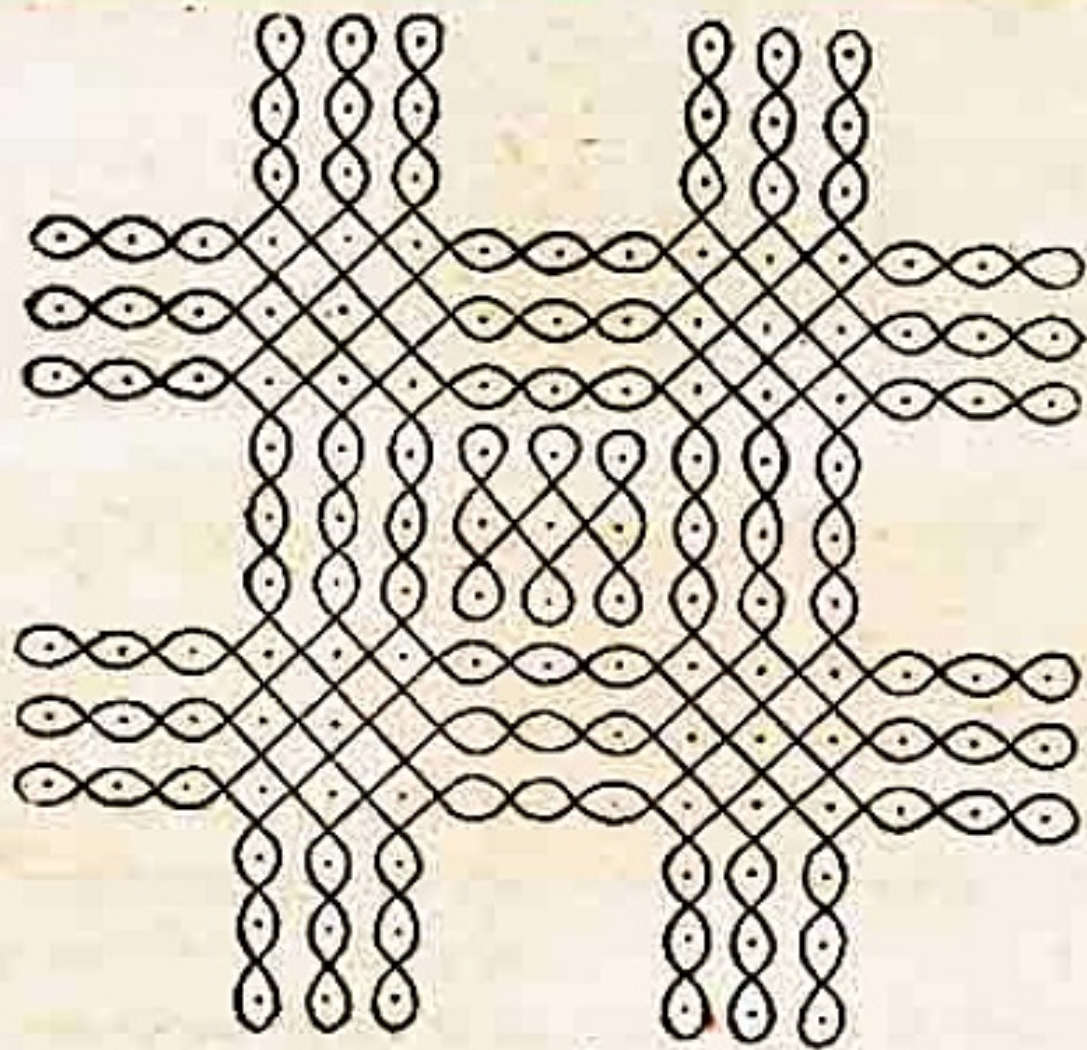
रमाबाई
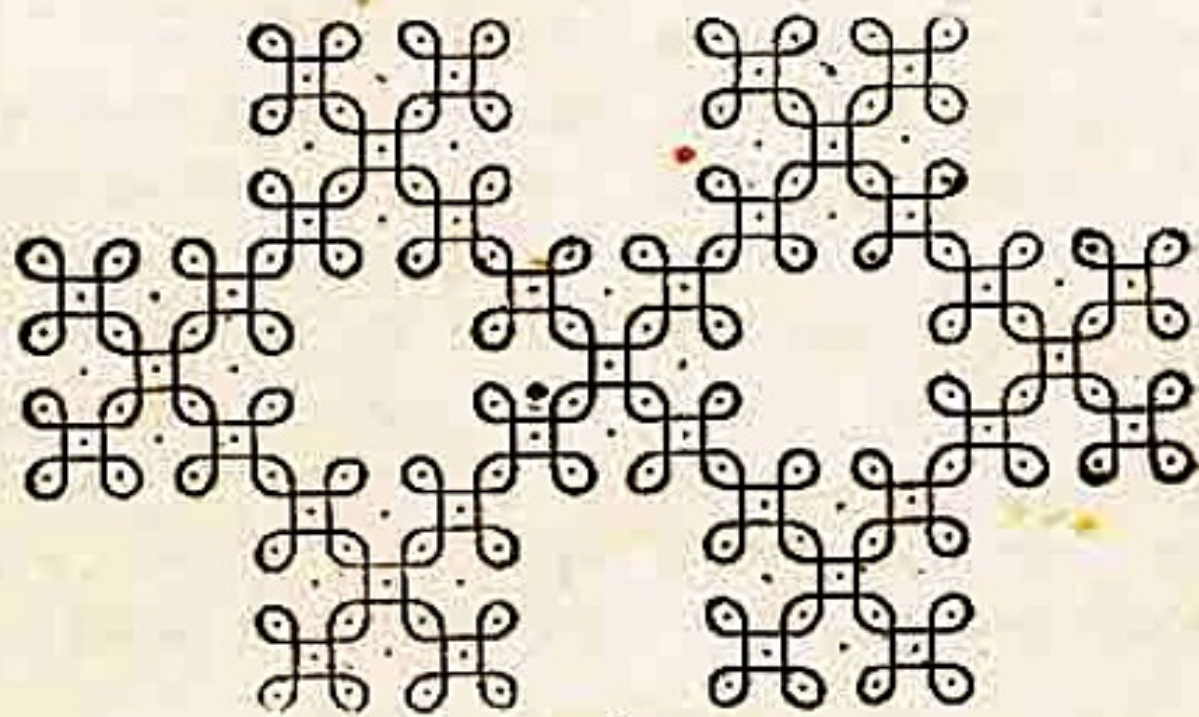
सुशीला

ताश की पत्तियाँ गायब करना

दर्शकों की आँखों में धूल झोंक कर उनकी चुनी हुई ताश की पत्तियों को गायब कर दिया जा सकता है। आप कहेंगे—'यह तो बड़ा मुश्किल है।' लेकिन वास्तव में यह बहुत आसान है।

ताश की एक गड्डी ले लीजिए। उनमें दो दो पत्तियों को ऐसे चिपका दीजिए जिससे दोनों की संख्याएँ बाहर की ओर रहें। यों चिपकाने के बाद अगर आप एक ओर देखिएगा तो एक पत्ती दिखाई पड़ेगी। लेकिन उलट कर देखिएगा तो वह दूसरी ही पत्ती निकलेगी।

ताश की एक गड्डी में कुल बावन पत्तियाँ रहती हैं। लेकिन आपने दो दो पत्तियाँ चिपका दी हैं न! इसलिए अब कुल छब्बीस पत्तियाँ ही होंगी। उन्हीं छब्बीस पत्तियों से आपको अपना काम चलाना है।

अब आप उन पत्तियों को दर्शकों की ओर करके पकड़िए। फिर उनमें से किसी को बुलाइए और उससे कहिए कि वह किसी पत्ती को ऊपर निकाल कर मन में याद कर ले। फिर और एक को बुला कर उसे भी एक पत्ती चुन कर याद रखने के लिए कहिए। इस तरह वे दोनों दो पत्तियाँ चुन लेंगे और उन्हें याद रखेंगे। अब आप दर्शकों से कहेंगे कि 'देखिए! मैं इन दोनों महाशयों की चुनी हुई पत्तियाँ इस गड्डी में से गायब कर दूँगा।' यों कह कर आप गड्डी को होशियारी के साथ उलट कर मिला दीजिए। फिर उन्हें फैला कर दर्शकों को दिखाइए। दर्शक लोग यह देख कर हैरान हो जाएँगे कि उन की चुनी पत्तियाँ उस गड्डी में नहीं हैं। उनकी समझ में न आएगा कि आखिर वे गईं कहाँ!

लेकिन यह तमाशा करते समय एक विषय में सावधान रहिए। पत्तियाँ दर्शकों को दिखाते समय उन्हें यह न मालूम होने पाए कि दो दो पत्तियाँ चिपकी हुई हैं।

क्योंकि अगर उन्हें यह मालूम हो जाएगा तो आप का भंडा ही फूट जाएगा। इस विषय में सावधान रहने पर फिर आपके लिए डरने की कोई बात नहीं है। [जो प्रोफेसर साहब से पत्र-व्यवहार करना चाहें वे उनको 'चंदामामा' का उल्लेख करते हुए अंग्रेज़ी में लिखें।

प्रोफेसर पा. सा. सरकार, मंजिशियन
पो. बा. ७८७८ कलकत्ता १२]

चाँद

[कुमार "रमेश"]

शशि अंबर में मुसकाता।
किरणों का जाल बिछाता।

चमचम जग को चमकाता
धीरे से पैर — बढ़ाता
फिर बादल में छिप जाता

अमृत — बूँदें बरसाता।
शशि अंबर में मुसकाता।

तारों से रास रचाता
मोहिनी छटा छहराता
कण कण में कांति जगाता

चाँदनी जगत पर छाता।
शशि अंबर में मुसकाता।

उसे देख बच्चे फूले
सुख के झूले पर झूले
किलकारी भर कर बोले—

'नीचे क्यों न उतर आता?'
सुन कर शशि फिर मुसकाता!

यह आठ हिस्सों में कटी हुई एक जानवर की तस्वीर है। इन हिस्सों को यदि फिर मिलाया जाए तो जानवर दिखाई पड़ेगा। अगर तुमसे न हो तो ५६-वाँ पृष्ठ देखो।

विनोद-वर्ग

१			ज		
२		ज		ज	
३	ज		ज		ज
४		ज		ज	
५			ज		

निम्न-लिखित संकेतों की सहायता से इस वर्ग को पूरा करो :

१. राम का जन्म

२. चाँदी का पानी

३. कमल का पराग

४. राजाओं का खाना

५. बहुत उलझन वाला

अगर न पूरा कर सको तो जवाब ५६-वें पृष्ठ में देखो।

प्यारे बच्चो !

ऊपर के वर्ग के चारों कोनों में चार चिड़ियाँ हैं। वर्ग के बीचों-बीच एक घोंसला है। चारों चिड़ियाँ उस में जाना चाहती हैं। लेकिन एक ही चिड़ियाँ जा सकती है। बताओ तो देखें, वह चिड़ियाँ कौन सी है?

---

९ चित्रों वाली पहेली का जवाब :—

१ और ९ संख्या वाले चित्र एक से हैं।

चन्दामामा पहेली

संकेत

बायें से दायें:

१. जैनों के एक तीर्थंकर

५. राय

६. एक तरह का कपड़ा

७. मेरा

९. अँधेरा

१०. अनगिनत

१३. जमघट

१४. संतान के ससुर

१६. एक त्यौहार

१७. मनुष्य

१८. हवा

२०. खतम

ऊपर से नीचे:

२. मधु

३. पाताल

४. न ज्यादा ठंडा, न गरम

५. प्रेम

७. मस्तिष्क

८. हीरों का हार

११. तुम्हारा

१२. देवताओं का मधु पीना

१४. सौ बरस

१५. मछुआ

१८. स्त्री

१९. तपता हुआ

मैं कौन हूँ ?

★

मैं पाँच अक्षरों का
एक पवित्र ग्रन्थ हूँ ।

मेरा पहला अक्षर
ममता में है, पर
स्नेह में नहीं ।

मेरा दूसरा अक्षर
पहाड़ में है, पर
पर्वत में नहीं

मेरा तीसरा अक्षर
प्रभात में है, पर
प्रात में नहीं ।

मेरा चौथा अक्षर
नीरज में है, पर
वारिज में नहीं

मेर पाँचवा अक्षर
तपन में है, पर
जलन में नहीं ।

क्या तुम बता सकते हो
कि मैं कौन हूँ ?

अगर न बता सको तो
जवाब ५६-वें पृष्ठ में देखो

चोरी करे कोई और पकड़ा जाए कोई !
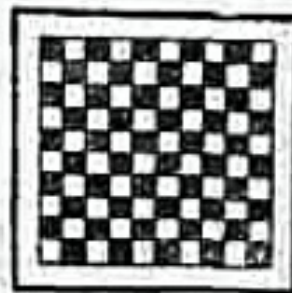
बच्चो ! ऊपर के चित्र देखो। हरेक चित्र के नीचे उसका नाम लिखो। फिर हर दो चित्रों के नामों के पहले अक्षर मिला कर बगल में लिख लो। जब तुम उन दोनों पहले अक्षरों को मिला कर पढ़ोगे तो अन्त में दिए हुए अर्थ वाले शब्द निकल आएँगे। अगर तुम से यह न हो सके तो जवाब के लिए ५६-वाँ पृष्ठ देखो।

इस तस्वीर को रंग कर अपने पास रख लेना और अगले महीने के चन्दामामा के पिछले कवर पर के चित्र से उसका मिलान करके देख लेना।

बताओ तो देखें
कि ये आड़ी
लकीरें तिरछी
हैं या सीधीं ?
तुम्हारी आँखें
तुम्हें धोखा
देती हैं न ?

कटी हुई तस्वीर वाली पहेली का जवाब :

चन्दामामा पहेली का जवाब :

म	हा	वी	र			
	ला		सा			
स		म	त			
म	ल	म	ल			
शो		ता		म	म	
त	म		अ	ग	णि	त
ल		सो		ज	मा	व
	स	म	धी		ला	
	द्री	पा	न	लो		
		न	र		बा	त
				स	मा	म

विनोद वर्ग का जवाब :

१. रामजनन, २. रजतजल, ३. जलजरज
४. राजभोजन, ५. अतिजटिल

'मैं कौन हूँ' का जवाब :— महाभारत

चित्रों वाली पहेली का जवाब :
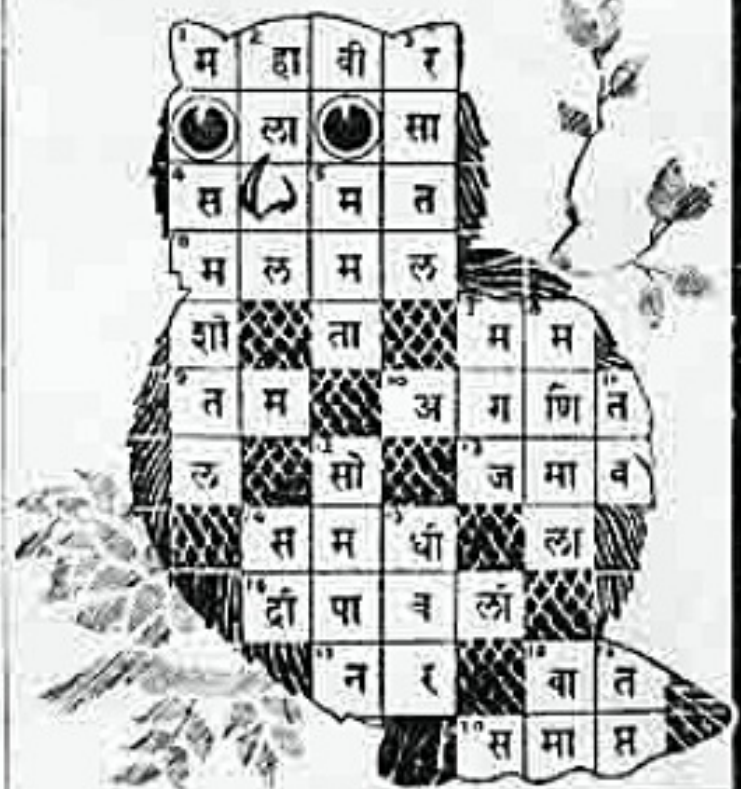
१. आइना; पति – आय
२. मूली; कटहल – मूक
३. चंचु; पारावत – चंपा
४. देवालय; वर्ग – देव

Controlling Editor : SRI CHAKRAPANI

Photo by Marcus Bartley

ही! ही! ही! ही!

CHANDAMAMA (Hindi) JUNE 1950 Regd. No. M. 5452

बन्दरघुड़की